तकनीकी पुस्तिका संख्या 74

सब्जियों की उत्पादन तकनीकी

बालू राम चौधरी, पुष्पेन्द्र प्रताप सिंह
लालू प्रसाद यादव एवं गंगाधरा के.

भा.कृ.अनु.प.-केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान
बीछवाल, बीकानेर (राजस्थान) – 334 006

तकनीकी पुस्तिका संख्या 74

सब्जियों की उत्पादन तकनीकी

बालू राम चौधरी
पुष्पेन्द्र प्रताप सिंह
लालू प्रसाद यादव
गंगाधरा के.

भा.कृ.अनु.प.-केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान
बीछवाल, बीकानेर (राजस्थान) – 334 006

प्रकाशन
सब्जियों की उत्पादन तकनीकी (2018)
तकनीकी पुस्तिका नं. 74

प्रकाशक
निदेशक
भाकृअनुप–केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान
श्री गंगानगर मार्ग, बीछवाल औद्योगिक क्षेत्र डाकघर,
बीकानेर (राजस्थान)–334 006
दूरभाषः 0151–2250147, 0151–2250960
फैक्सः 0151–2250145
ई–मेलः ciah@nic-in

लेखक
डॉ. बालू राम चौधरी, वरिष्ठ वैज्ञानिक
डॉ. पुष्पेन्द्र प्रताप सिंह, प्रधान वैज्ञानिक
डॉ. लालू प्रसाद यादव, वैज्ञानिक
डॉ. गंगाधरा के., वैज्ञानिक

तकनीकी सहयोग
श्री पी.पी. पारीक
श्री बी.आर. खत्री
श्री संजय पाटिल

मुद्रण
मैसर्स रॉयल ऑफसेट प्रिन्टर्स, ए–89/1, नारायणा इण्डस्ट्रियल एरिया फेस–1, नई दिल्ली–110028

अनुक्रमणिका

क्र. सं.	विवरण	पृष्ठ संख्या
1	टमाटर	1
2	बैंगन	3
3	मिर्च	5
4	फूल गोभी	7
5	प्याज	9
6	लहसुन	11
7	भिण्डी	14
8	मटर	16
9	लोबिया	19
10	ग्वार फली	21
11	सेम फली	23
12	गाजर	25
13	मूली	27
14	शकरकंद	29
15	पालक	31
16	चौलाई	33
17	मेथी	35
18	खरबूजा	37
19	तर ककड़ी	40
20	काचरी	41
21	फूट ककड़ी	43
22	तरबूज	45
23	लौकी	47
24	करेला	49
25	टिंडा	50
26	धारीदार तोरई	52
27	घीया तोरई	54
28	खीरा	56
29	चप्पन कद्दू	57
30	काशीफल या कुम्हड़ा (कद्दू)	58
31	टनल तकनीक से कद्दूवर्गीय सब्जियों का उत्पादन	59
32	कद्दूवर्गीय सब्जियों के प्रमुख कीट–व्याधियाँ एवं प्रबन्धन	62

डॉ. टी.ए. मोरे
पुर्व कुलपति
महात्मा फुले कृषि
विध्यापीठ
राहुरी, महाराष्ट्र

प्राक्कथन

भारत एक प्रमुख सब्जी उत्पादक देश है। आज हमारे देश में लगभग 10.24 मिलियन हेक्टेयर भूमि पर सब्जियों की खेती की जाती है जिसका कुल उत्पादन 178.17 मिलियन टन है। हमारे देश का सब्जी उत्पादन में विश्व में दूसरा स्थान है, परंतु औसत उत्पादकता (17.4 टन प्रति हेक्टेयर) विकसित देशों की तुलना में बहुत कम है। सब्जियाँ पोषक तत्वों से भरपूर होने के कारण मानव स्वास्थ्य के लिये अति आवश्यक हैं। देश में बढ़ती जनसंख्या, शहरीकरण तथा पोषण सुरक्षा हेतु सब्जियों की माँग दिनों दिन बढ़ती जा रही है।

सब्जियों का उत्पादन बढ़ाने के लिए कृषि से संबंधित विभिन्न संस्थानों/ विश्वविद्यालयों में योजनाबद्ध तरीके से नई तकनीकियों का अनुसंधान एवं विकास कार्य किया जा रहा है। विकसित उन्नत उत्पादन तकनीकियों को अपनाकर कृषक अन्य फसलों की तुलना में सब्जी फसलों की खेती करके अपनी आय बढ़ा सकते हैं। सब्जियों के उत्पादन में राजस्थान अन्य प्रदेशों से पिछड़ा हुआ है। इसका मुख्य कारण है राज्य की विषम भौगोलिक परिस्थिति। यद्पि नवाचारों जैसे उन्नत किस्मों का उपयोग, जैविक खाद व उर्वरकों का संस्तुत समावेश, समन्वित कीट एवं रोग प्रबंधन, इत्यादि को योजनाबद्ध तरीके से अपनाकर प्रदेश के अर्ध–शुष्क व शुष्क क्षेत्रों में सब्जियों की खेती करके कृषक अपनी आय बढ़ा सकते हैं।

भाकृअनुप–केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर के वैज्ञानिकों डॉ. बालू राम चौधरी, डॉ. पुष्पेन्द्र प्रताप सिंह, डॉ. लालू प्रसाद यादव तथा डॉ. गंगाधरा के. ने अर्ध–शुष्क व शुष्क क्षेत्रों में सब्जियों का उत्पादन बढ़ाने के उद्देश्य से 'सब्जियों की उत्पादन तकनीकी' नामक तकनीकी बुलेटिन किसानों को मध्यनजर रखते हुये राजभाषा हिन्दी में लिखी। सभी लेखकगण तथा तकनीकी सहयोगी (श्री पी.पी. पारीक, श्री बी.आर. खत्री व श्री संजय पाटिल) बधाई के पात्र हैं। संस्थान के निदेशक प्रो. (डॉ.) पी.एल. सरोज भी बधाई के पात्र हैं जिहोने लेखकगणों को यह तकनीकी बुलेटिन लिखने के लिए प्रेरित किया। मुझे आशा ही नहीं पूर्ण विश्वास है की इस तकनीकी बुलेटिन के प्रकाशन से किसान, प्रसारकर्ता व अन्य पाठकगण लाभान्वित होंगे, जिसके फलस्वरूप राज्य में सब्जियों के उत्पादन में वृद्धि होगी।

(टी.ए. मोरे)

1. टमाटर

सब्जियों में टमाटर *(सोलेनम लाइकोपरसियम)* एक अत्यंत लोकप्रिय सब्जी है। भारत में इसकी खेती विभिन्न राज्यों जैसे उत्तर प्रदेश, कर्नाटक, महाराष्ट्र, हरियाणा, पंजाब, राजस्थान, बिहार इत्यादि में की जाती है।

जलवायु और मृदा

टमाटर गर्म मौसम की फसल है। यह फसल पाला सहन नहीं कर सकती है। तापमान 18 से 27^0 सेल्सियस के बीच उपयुक्त रहता है। फल लगने के लिए रात का आदर्श तापमान 20^0 सेल्सियस के आस पास रहना चाहिये। जल्दी फसल लेने के लिये बलुई मृदा सबसे ज्यादा उपयुक्त होती है जबकि अधिक उत्पादन के लिए भारी पोषक तत्व युक्त दोमट मृदा उपयुक्त है। जल निकास का उचित प्रबन्धन होना आवश्यक है।

खेत की जुताई के लिये सर्वप्रथम मिट्टी को पलटने वाले हल से जुताई करना चाहिए। उसके बाद 4 से 5 बार देशी हल से जुताई कर देते हैं फिर खेत का समतलीकरण करते हैं।

प्रमुख किस्में

पूसा सदाबहार, पूसा रोहिणी, पूसा उपहार, पूसा अर्ली ड्वार्फ, पूसा रूबी, रोमा, अर्का सौरभ, अर्का विकास, अर्का रक्षक, हिसार अनमोल, हिसार अरूण, हिसार ललित, पंजाब छुहारा, पंजाब केसरी

लम्बी दूरी तक ले जाने वाली किस्में: पूसा गौरव, रोमा, पंजाब छुहारा, पूसा उपहार, लैबोनिटा

प्रसंस्करण के लिए प्रयुक्त किस्में: पूसा गौरव, पूसा हाईब्रिड–2, पंजाब छुहारा, पूसा उपहार, अर्का सौरभ, पूसा हाईब्रिड–4, पूसा हाईब्रिड–8

अधिक तथा कम तापमान सहने वाली किस्में: पूसा शीतल, पूसा सदाबहार, पूसा हाईब्रिड–1

पौधशाला तैयार करने की विधि

एक हेक्टेयर क्षेत्र के लिऐ पौध तैयार करने हेतु 225 वर्ग मीटर पौधशाला की आवश्यकता होती है। साधारणतया पौधशाला में क्यारी को 7.5 मीटर लम्बा एवं 1 मीटर चौड़ा और 10–15 सेमी ऊँचा बनाना चाहिए। पौधशाला में सड़ी हुई गोबर की खाद में मिलाना चाहिए। मुक्त परागित किस्मों की 400 से 500 ग्राम तक संकर किस्मों की 125–150 ग्राम बीज की आवश्यकता होती है। बुवाई से पहले बीज को थिरम या केप्टान से 2 ग्राम/ किग्रा के हिसाब से उपचारित करते हैं जिससे आर्द्र गलन नामक बीमारी से बचा जा सके। बुवाई के समय पौधशाला में क्यारियों को सूखे पुआल से ढक देते हैं जिससे तापमान और आर्द्रता बनी रहे।

पौध रोपण: चार से पाच सप्ताह में पौध रोपण के लिऐ तैयार हो जाती है। पौध से पौध तथा लाईन से लाईन की दूरी क्रमशः 60x45 सेमी, 75x60 सेमी तथा 75x75 सेमी के हिसाब से उभरी हुई बेड पर लगाते हैं।

पोषक तत्व प्रबंधन

रोपाई के एक माह पहले अच्छी सड़ी गली गोबर की खाद 200–250 क्विंटल/ हेक्टेयर की दर से भूमि में अच्छी तरह मिला देना चाहिए। 90–100 किग्रा नत्रजन, 60–70 किग्रा फास्फोरस तथा 50–60 किग्रा पोटाश/ हेक्टेयर डाला जाता है। नत्रजन की एक तिहाई व बाकी उर्वरकों की पूरी मात्रा अंतिम जुताई के समय खेत में डालें। नत्रजन की शेष मात्रा को दो बराबर भागों में

बांटकर 30–45 दिन बाद (निराई के बाद) तथा 70–75 दिन बाद खड़ी फसल में देना चाहिए।

तुड़ाई और उपज

मुक्त परागित किस्मों से 250–300 क्विंटल/हेक्टेयर तथा संकर किस्मों से 500–600 क्विंटल/हेक्टेयर तक उपज प्राप्त होती है।

बीमारियाँ एवं प्रबन्धन

आर्द्र गलन: यह बीमारी पौधशाला में अधिक लगती है। पौधे जड़ों के पास से सड़ने लगते हैं जो कि फाइटोफ्थोरा, पीथियम, स्क्लेरोसियम और फ्यूजेरियम की विभिन्न प्रजातियों से होता है।

रोकथाम के लिए बीज को थिरम (2.5 ग्राम/किग्रा) से उपचार करें। थिरम या केप्टान (2 ग्राम/लीटर) घोलकर 7–10 दिन के अन्तर पर दो बार क्यारी में छिड़काव करें। इस बीमारी को रोकने के लिये बीज को ट्राइकोडर्मा 6–8 ग्राम प्रति किग्रा की दर से उपचारित करना चाहिए। ट्राइकोडर्मा की 10–20 ग्राम मात्रा प्रति किग्रा कम्पोस्ट या गोबर की खाद में मिलाकर एक वर्गमीटर मृदा के शोधन के लिये प्रयोग करना चाहिये।

पिछेती झुलसा रोग: यह बीमारी *फाइटोफ्थोरा इन्फेसटान्स* नामक कवक के द्वारा होती है। पत्तियों पर कत्थई से बैंगनी काले रंग के धब्बे दिखाई देने लगते हैं। बाद में ज्यादा संक्रमण होने पर पौधा मर जाता हैं। यह बीमारी का प्रकोप कम तापमान और अधिक आर्द्रता होने दिखाई देती है।

इन्डोफिल एम–45 (2 ग्राम/ लीटर) का पौधों की बढ़वार की अवस्था में छिड़काव लाभप्रद होता है। टमाटर को आलू के पास न लगायें।

अगेती झुलसा रोग: यह बीमारी *अल्टरनेरिया सोलेनाई* नामक कवक से होती है। गहरे कत्थई रंग के गोल धब्बे पत्तियों तथा तनों पर दिखाई देते हैं। बाद में अधिक संक्रमण होने पर घुमावदार घेरे की तरह धब्बे बन जाते हैं।

गर्म पानी से (52–55^0 सेल्सियस) बीज का उपचार करें। इन्डोफिल एम–45 नामक कवकनाशी का छिड़काव करने से इस बीमारी को कम किया जा सकता है।

पत्ती मुड़ाव रोग: इस बीमारी से पत्तियाँ मुड़ जाती हैं तथा पत्तियों का आकार टेढ़ा हो जाता है जिससे पौधे की बढ़वार रूक जाती है। यह बीमारी विषाणु के द्वारा होती है तथा इसका वाहक कीट सफेद मक्खी होता है।

सफेद मक्खी का प्रकोप होने पर इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस एल 0.4–0.5 मिली दवा प्रति लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करना चाहिए।

2. बैंगन

बैंगन *(सोलेनम मेलोंजेना)* एक बहुउपयोगी सब्जी है जो देश के हर हिस्से में उगायी जाती है। इसकी खेती वर्ष में तीन बार वर्षा, शरद व ग्रीष्म ऋतु में की जाती है।

जलवायु और मृदा

बैंगन की फसल हेतु गर्म जलवायु जहाँ पाला कम पड़ता हो, उपयुक्त है। दोमट मृदा में अच्छी उपज मिलती है जबकि बलुई दोमट मृदा में फलत जल्दी किन्तु कम मिलती है तथा चिकनी मृदा में फलत देर से मिलती है। 3–4 जुताईयां करके पाटा लगा देते हैं तथा सिंचाई व जल–निकास के लिये नालियां बनाना चाहिए।

प्रमुख किस्में

गोल फल वाली: पूसा उत्तम, पूसा उपकार, पूसा संकर–6 व पूसा संकर–9

लम्बे फल वाली: पूसा श्यामला, पूसा क्रान्ति व पूसा संकर–5

गोल व छोटे फल वाली: पूसा बिन्दु व पूसा अंकुर

पौध तैयार करना

पौधशाला का स्थान थोड़ा ऊँचाई व ढालू हो ताकि वहां पानी न भरे व वर्षा का पानी बहकर निकल जाये। एक वर्गमीटर में 2 किग्रा सड़ी गोबर की खाद तथा भारी मिट्टी में 2–3 किग्रा बालू मिला दें। मिट्टी में ताम्रयुक्त फफूंदनाशक की 2 ग्राम प्रति लीटर पानी में घोलकर मिट्टी तर कर दें। इसी प्रकार कीटनाशक के रूप में कार्बोफ्यूरान की 5 ग्राम मात्रा प्रति वर्ग मीटर पौधशाला की क्यारी में मिलायें तत्पश्च्यात लाइन में बुआई करें।

खाद और उर्वरक

खाद और उर्वरक की मात्रा मिट्टी परीक्षण के आधार पर ही निर्धारित करना चाहिए। बैंगन में खाद की मात्रा इसकी किस्म व मिट्टी पर निर्भर करती है। अच्छी फसल हेतु अन्तिम जुताई के समय सड़ी गोबर की खाद 200–250 क्विंटल प्रति हेक्टेयर अवश्य डालें। 80–100 किग्रा नत्रजन, 60–80 किग्रा फास्फोरस तथा 50–60 किग्रा पोटाश प्रति हेक्टेयर डालना चाहिए। नत्रजन की एक तिहाई व बाकी उर्वरकों की पूरी मात्रा अंतिम जुताई के समय खेत में डालें। नत्रजन की शेष मात्रा को दो बराबर भागों में बांटकर 30–45 दिन बाद (निराई के बाद) तथा 70–75 दिन बाद खड़ी फसल पर में देना चाहिए।

बीज की मात्रा और रोपाई

एक हेक्टेयर के लिए 400–600 ग्राम बीज की आवश्यकता होती है। पौध की रोपाई मेड़ पर या समतल जमीन पर करें। रोपाई शाम के समय करना चाहिए।

सिंचाई व खरपतवार नियंत्रण

गर्मी में 6–7 दिन पर तथा जाड़े में 10–15 दिन पर सिंचाई करें। पौधों को गिरने से बचाने के लिए 25–30 दिन बाद गुड़ाई करके जड़ों पर मिट्टी चढ़ा दें। बैंगन की फसल में संकरी पत्ती व चौड़ी पत्ती वाले खरपतवारों द्वारा 25–40 प्रतिशत तक नुकसान होता है। रोपाई के 45–50 दिनों बाद तक खेत की घास को निकालने से पौधों की बढ़वार अच्छी होती है। खेत में पूर्ण रूप से सड़ी हुई खाद का प्रयोग करें ताकि खाद के साथ खरपतवारों के बीज पुनः खेत में न पहुंचे। रासायनिक नियंत्रण में पेन्डीमेथालीन 3.3 लीटर दवा को 800 लीटर पानी

में घोलकर एक हेक्टेयर में रोपाई से पहले छिड़क देना चाहिए।

उपज

250–300 क्विंटल/हेक्टेयर

प्रमुख रोग और प्रबंधन

आर्द्र गलन: यह बीमारी पौधशाला में अधिक लगती है। पौधे की जड़ों के पास में सड़ने लगते हैं जो कि फाइटोफ्थोरा, पीथियम, स्क्लेरोसियम और फ्यूजेरियम की विभिन्न प्रजातियों से होता है।

रोकथाम के लिए बीज को थिरम (2.5 ग्राम/किग्रा) से उपचार करें। थिरम या केप्टान (2 ग्राम/लीटर) घोलकर 7–10 दिन के अन्तर पर दो बार क्यारी में छिड़काव करें। बीज को ट्राइकोडर्मा 6–8 ग्राम प्रति किग्रा की दर से उपचारित करना चाहिए। ट्राइकोडर्मा की 10–20 ग्राम मात्रा प्रति किग्रा कम्पोस्ट या गोबर की खाद में मिलाकर एक वर्गमीटर मृदा के शोधन के लिये प्रयोग करना चाहिये।

फोमोप्सिस झुलसा: इसके लक्षण पत्ती फल और तने पर दिखाई देते हैं। पत्ती पर गोल धब्बे, तने का सूखना व फल का सड़ना इसके प्रमुख लक्षण हैं।

इसके लिए रोग रहित किस्मों का चुनाव करें तथा बीजों को कार्बण्डाजिम (2 ग्राम प्रति किग्रा बीज) से उपचारित करें। खेत में फल आने के समय से ही इंडोफिल एम–45 2.5 ग्राम या कार्बण्डाजिम 1.0 ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करना चाहिए। छिड़काव 8–10 दिन के अन्तर पर करें।

जीवाणु उकठा रोग: यह रोग पौधे की निचली पत्तियों से शुरू होता है और बाद में पूरी पत्तियां पीली होकर सूखने लगती हैं। तने को काटकर देखने पर दूधिया रंग का लसलसा पदार्थ दिखाई देता है।

फसल–चक्र अपनाना चाहिये। पौधों की जड़ों में रोपाई से पूर्व स्ट्रेप्टोसाइक्लिन नामक दवा के 100 पीपीएम (100 मिग्रा प्रति लीटर पानी) के घोल में आधे घंटे तक डुबोने के बाद रोपाई करनी चाहिये।

प्रमुख कीट एवं प्रबंधन

तना और फल भेदक: इस कीट की इल्ली शुरू में अण्डे से निकलने के बाद फल व कोमल पत्ती खाती है। कीटग्रस्त शाखा मुरझाकर लटक जाती हैं व बाद में सूख जाती हैं। फल अवस्था में इल्लियां फल में छेद बनाकर घुस जाती हैं और अंदर ही अंदर खाती हैं तथा जिससे फल सड़ जाते हैं।

इसके नियंत्रण के लिए रोगग्रसित शाखा को तोड़कर नष्ट करें। कीटों का आक्रमण होते ही डाइमेथोएट की 2 मिली/ ग्राम मात्रा प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें। फल वाली अवस्था में फल तोड़ने के बाद कीटनाशी का छिड़काव करना चाहिए। दवा छिड़काव के 8–10 दिन बाद फलों की तुड़ाई करनी चाहिए।

जैसिड: यह पत्ती का रस चूसते हैं जिसमें पत्तियां ऊपर की तरफ मुड़ जाती हैं। बचाव के लिए खेत को खरपतवार मुक्त रखें ताकि कीटों का आश्रय खत्म हो जाये। खड़ी फसल में डाइमेथोएट की 2 मिली/ ग्राम मात्रा प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें।

सफेद मक्खी: यह कीट पौधों की कोमल पत्तियों से रस चूसते हैं, जिससे पौधे पीले पड़कर सूख जाते हैं। यह कीट विषाणु जनित रोगों का संचरण भी रोगी पौधे से स्वस्थ पौधे में करता है।

नियंत्रण हेतु इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस एल 0.4–0.5 मिली दवा प्रति लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करना चाहिए।

3. मिर्च

मिर्च *(केप्सिकम एनम)* को तीखी मिर्च भी कहते हैं। 16वीं शताब्दी में ब्राजील से पुर्तगालियों द्वारा यह भारत में लाई गई। मिर्च के उत्पादक मुख्य राज्य आन्ध्र प्रदेश, कर्नाटक, महाराष्ट्र, उड़ीसा, तमिलनाडु, मध्यप्रदेश, पश्चिम बंगाल और राजस्थान हैं।

जलवायु और मृदा

मिर्च की खेती गर्म मौसम की फसल है। बीज अंकुरण के लिये 16–20^0 सेल्सियस, पौधे की बड़वार के लिए 21–27^0 सेल्सियस तथा फल विकास के लिए 30^0 सेल्सियस तापमान उपयुक्त है। मिर्च की फसल विभिन्न प्रकार की मृदा में उगाई जा सकती है परन्तु सबसे अच्छी फसल बलुई दोमट व दोमट मृदा जिसका पी.एच. मान 5.6 से 6.8 हो, उपयुक्त रहता है।

मिर्च की किस्में

आन्ध्रा ज्योति, पूसा ज्वाला, पंजाब लाल, भास्कर, पूसा सदाबहार, अर्का अबीर

शिमला मिर्च की किस्में

कैलीफोर्निया वन्डर, अर्का मोहिनी, अर्का गौरव, अर्का बसन्त, पूसा दीप्ति

बीज की मात्रा

मिर्च के लिये 1000 से 1200 ग्राम बीज व शिमला मिर्च के लिए 600–800 ग्राम प्रति हेक्टेयर बीज की आवशयकता होती है।

बुवाई का समय

मिर्च मुख्यतः खरीफ ऋतु (जून से लेकर अक्टूबर तक) की फसल है। उत्तर भारत में मिर्च सर्दियों में भी उगाई जाती है लेकिन तापमान कम होने के कारण उपज कम होती है।

पौध रोपण

रोपाई की दूरी किस्म पर निर्भर करती है। सामान्यतया पंक्ति से पंक्ति की दूरी 45 सेमी व पौधे से पौधे की दूरी 45 सेमी रखते हैं।

खाद और उर्वरक

खेत की तैयारी के समय 200 से 250 क्विंटल गोबर की खाद 80–100 किग्रा नत्रजन, 60–80 किग्रा फास्फोरस व 50–60 किग्रा पोटाश देना चाहिए। रोपाई के 30–35 दिन बाद खड़ी फसल में 50 किग्रा नत्रजन प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग करें।

उपज

शिमला मिर्च की सामान्य प्रजाति में औसत फल उपज 180 से 250 क्विंटल/ हेक्टेयर तथा संकर प्रजाति की उपज 250 से 350 क्विंटल/ हेक्टेयर है। हरी मिर्च की पैदावार 90–110 क्विंटल/ हेक्टेयर तथा सूखी मिर्च की उपज 20 से 30 क्विंटल/ हेक्टेयर होती है।

पौध संरक्षण

आर्द्र गलनः इस बीमारी से बचने के लिये कॉपर आक्सीक्लोराइड 2 ग्राम/ किग्रा की दर से बीज को शोधित कर लेना चाहिए।

एन्थ्रेकनोजः यह बीमारी कवक के द्वारा फैलती है। पत्तियों पर छोटे–छोटे जलीय युक्त धब्बे दिखाई देते हैं जो बाद में बढ़कर गहरे रंग के हो जाते हैं नई शाखाओं में भी ऊपर से नीचे की

ओर डाईबेक दिखाई पड़ती है यह बीमारी बीज के द्वारा उत्पन्न होती है।

थिरम या केप्टान (2 ग्राम/ किग्रा) बीज का उपचार करें तथा साथ ही टापसीन एम या इन्डोफिल एम–45 (2 ग्राम/ लीटर पानी) का 15 दिन के अन्तराल पर छिड़काव करें।

पर्ण कुंचन विषाणु रोगः यह विषाणु के द्वारा फैलने वाली गंभीर बीमारी है। इसमें पत्तियाँ मुड़ जाती है तथा शिरायें मोटी हो जाती है। बीमारी की अग्रिम अवस्था पर आक्जलेरी कलिकाएं उत्तेजित होकर गुच्छे में पत्तियाँ उत्पन्न होती है जो आकार में छोटी हो जाती है। यह रोग सफेद मक्खी नामक कीट द्वारा फैलता है। सफेद मक्खी के नियंत्रण हेतु इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस एल 0.4–0.5 मिली दवा प्रति लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करना चाहिए।

ग्रसित पौधों को उखाड़कर खेत के बाहर जला देना चाहिए। डाइमेथोएट 2 मिली/ लीटर के हिसाब से 10 दिन के अन्तर पर 3 छिड़काव करना चाहिए।

4. फूल गोभी

फूल गोभी (*ब्रेसिका ओलिरेसिया* किस्म *बोट्राइटिस*) का उत्पादन भारत में सर्वाधिक होता है। इसकी खेती मुख्यतः बिहार, उत्तर प्रदेश, उड़ीसा, आसाम, हरियाणा और महाराष्ट्र आदि राज्यों में की जाती है।

जलवायु और मृदा

फूल गोभी की खेती के लिये 23^0 सेल्सियस तापमान उपयुक्त रहता है। मिट्टी का पी.एच. मान 6 से 7 होना चाहिए। फूल गोभी की फसल विभिन्न प्रकार की मृदा में उगाई जा सकती है परन्तु सबसे अच्छी मृदा बलुई दोमट से लेकर भारी दोमट है।

किस्में

अगेती किस्में: अर्ली कुंवारी, पूसा अर्ली सिन्थेटिक, पंतगोभी–3, पंतगोभी–2, पूसा दीपाली, पूसा मेघना, पूसा कार्तिक संकर

मध्य–अगेती किस्में: इम्प्रूवड जापानीज, पूसा हाईब्रिड–2, पूसा शरद, पंत गोभी–4

मध्य–देर वाली किस्में: पूसा सिन्थेटिक, पन्त शुभ्रा, पूसा हिमज्योति

देर से बोने वाली किस्में: पूसा स्नोबाल–1, पूसा स्नोबाल के–1, पूसा स्नोबाल के टी–25

बुवाई का समय

उत्तर भारत में सबसे पहले लगाई जाने वाली फसल मई–जून में बोई जाती है। स्नोबाल प्रजाति के बीजों की अगस्त–सितम्बर में बुवाई करते हैं और उनका पौध रोपण सितम्बर–अक्टूबर में करते हैं तथा फसल की तुड़ाई मार्च–अप्रैल तक कर सकते हैं।

पौधशाला तैयार करने की विधि

अर्ली प्रजाति वाली फूल गोभी की फसल के लिये 500 से 600 ग्राम बीज प्रति हेक्टेयर की आवशयकता होती है। मध्य और देर से बोने वाली प्रजाति में 350 से 400 ग्राम प्रति हेक्टेयर बीज की आवशयकता होती है। कतार से कतार की दूरी 7 सेमी रखते हैं। बीज बोने के बाद उसको 0.5–1 सेमी तक मिट्टी से ढ़क देते हैं। इसके बाद पौधशाला की क्यारी को सूखी घास से ढ़क देते हैं जिससे आर्द्रता बनी रहे। जैसे ही बीज अंकुरित होने लगे इस घास को हटा देना चाहिए। साधारणतया पौधशाला में बुवाई के 4 से 6 सप्ताह में पौध रोपण के लिये तैयार हो जाती है।

खेत की तैयारी

पौध रोपण से पहले खेत की अच्छे से जुताई करनी चाहिए जिससे कि मिट्टी भुरभुरी हो जाए। पौध रोपण से पहले खाद एवं उर्वरक मिला देते हैं। बेड को इस तरह तैयार करते हैं कि अतिरिक्त पानी मिट्टी से निकल जाए जिससे मिट्टी का क्षरण न हो।

पौध रोपण

45x45 सेमी की दूरी पर रोपाई करने से अधिक उत्पादन मिलता है किन्तु स्नोबाल प्रजाति में 60x60 सेमी की दूरी रखना सर्वाधिक उपयुक्त पाया गया है।

पोषक तत्व प्रबन्धन

पोषक तत्वों के प्रबन्धन के लिए फूल गोभी के खेत में प्रति हेक्टेयर 150–200 किग्रा नत्रजन 40–50 किग्रा फास्फोरस 130–180 किग्रा पोटाश की मात्रा डालते हैं। आधी मात्रा नत्रजन की और

पूरी मात्रा फास्फोरस और पोटाश की खेत में पौध रोपण से पहले डाल देते हैं। आधी बची हुई नत्रजन की मात्रा का 1/2 भाग 25 से 30 दिन बाद एवं 50 से 60 दिन बाद खेत में डाल देते हैं।

खरपतवार नियंत्रण

पौध रोपण से पहले 3.3 लीटर पेन्डीमेथालीन प्रति हेक्टेयर की दर से डालने से दोबीजपत्री खरपतवार नष्ट हो जाते हैं।

उपज

फूल गोभी की अधिकतम उपज 200–300 क्विंटल प्रति हेक्टेयर प्राप्त की जा सकती है। देर से और मध्य में बोई जाने वाली प्रजातियों में 350–400 क्विंटल प्रति हेक्टेयर उपज प्राप्त की जा सकती है।

पौध संरक्षण

आर्द्र गलनः यह पौधशाला की क्यारियों में पौध गलन की एक महत्वपूर्ण समस्या है। यह पीथियम नामक कवक के द्वारा होती है। इसके आक्रमण से पौध का ऊपरी भाग जल्दी से गिर जाता है तथा पौधा मर जाता है।

पौधशाला की क्यारियों की 25 मिली/ लीटर पानी की दर से फार्मलडिहाइड को बुवाई से पहले ड्रेन्चिग करना चाहिए। पौधशाला की क्यारियों को 56 घंटे तक पोलिथीन से ढ़क देना चाहिए। इसके अलावा केप्टान नामक दवा का 2 ग्राम/ प्रति लीटर पानी में घोलकर दुबारा भूमि की ड्रेन्चिग करें। बीज को केप्टान 2 ग्राम/ किग्रा के हिसाब उपचारित करना चाहिए।

चूर्णिल आसिताः ग्रसित पौधों की पत्तियों की सतह पर सफेद या धूसर चूर्ण जैसे दाने पाये जाते हैं। ये धब्बे तेजी से बढ़कर पत्ती की ऊपरी सतह एवं निचली सतह को संक्रमित कर देते हैं रोग की उग्र अवस्था पर सभी पत्तियां (लगभग) सफेद चूर्ण से ढ़क जाती है जिससे फलों का आकार छोटा हो जाता है।

रिडोमिल एम जेड–78 अथवा इंडोफिल एम–45 2.0 ग्राम प्रति लीटर पानी के हिसाब से 10–15 दिन के अन्तराल पर फसल का छिड़काव करें।

काला सड़न रोगः यह बीमारी जैन्थोमोनास नामक बैक्टीरिया के द्वारा होती है। संक्रमित पत्तियों के किनारे के ऊतक पीले पड़ जाते हैं और क्लोरोसिस पत्तियों के मध्य की ओर बढ़ जाती है।

स्ट्रैप्टोसाइक्लीन या एग्रीमाईसीन (100 पीपीएम) नामक दवा में बीज को 30 मिनट तक डुबोकर रखें तथा बाद में बुवाई करें।

5. प्याज

प्याज *(एलियम सेपा)* एलियेसी परिवार का सदस्य है। पूरे विश्व में चीन प्याज का सबसे ज्यादा उत्पादन करता है। भारत प्याज के उत्पादन और क्षेत्रफल की दृष्टिकोण से दूसरे स्थान पर है। भारत देश में इसकी खेती मुख्यतः महाराष्ट्र, कर्नाटक, गुजरात, उड़ीशा, आन्ध्रप्रदेश, उत्तरप्रदेश, तमिलनाडु, राजस्थान और बिहार राज्यों में होती है। इन राज्यों में से महाराष्ट्र प्याज के क्षेत्रफल और उत्पादन दोनों दृष्टिकोणों से सबसे ऊपर है।

जलवायु और मृदा

प्याज मुख्यत शीत ऋतु की फसल है। प्याज की खेती विविध जलवायु में की जा सकती है। इसकी अच्छी बढ़वार के लिये आर्द्रता आवश्यक होती है। प्याज की अच्छी फसल के लिये मृदा की उर्वरा क्षमता और उसमें से जल निकासी की क्षमता भी अच्छी होनी चाहिए। बलुई मृदा में सिंचाई जल्दी–जल्दी करनी पड़ती है पर इस मृदा में प्याज की फसल जल्दी पकती है प्याज की फसल के लिऐ मृदा का पी.एच.मान 5.0 से 6.5 तक होना चाहिए।

किस्में

लाल रंग वाली: पूसा रेड, पूसा रतनार, पूसा माधवी, आर.ओ.–1, आर.ओ.–59, नासिक रेड, अर्का निकेतन, अर्का कल्याण, अर्का बिन्दु, एग्रीफाउण्ड लाईट रेड, एग्रीफाउण्ड डार्क रेड, भीमा सुपर, भीमा डार्करेड

सफेद रंग वाली: पूसा व्हाइट फ्लेट, पूसा व्हाइट राउण्ड, पंजाब–48, उदयपुर–101, भीमा शुभ्रा, भीमा श्वेता

पीले रंग वाली: अर्ली ग्रेनो, ब्राउन स्पैनिश, भीमा परपल

बुवाई का समय व बीज दर

खरीफ प्याज की पौधशाला में बुवाई जून में करते हैं और रबी की फसल के लिए बुवाई अक्टूबर मध्य से लेकर नवम्बर मध्य तक करते हैं। एक हेक्टेयर में बुवाई के लिये 8–10 किग्रा बीज की आवश्यकता होती है।

पौध तैयार करने की विधि

बलुई मिट्टी में पौध लगाने के लिये समतल भूमि का उपयोग होता है। क्यारी की चौड़ाई 70–75 सेमी तथा लम्बाई 3.5 मीटर रखकर क्यारी के ऊपरी 2–3 सेमी भाग में कम्पोस्ट खाद मिला देते हैं। प्याज के बीज 5 से 7 सेमी की दूरी पर लाईन बनाकर लगाते हैं तथा इसकी गहराई 1.0 से 1.5 सेमी रखते हैं। बुवाई से पहले बीज को थिरम (2 ग्राम प्रति किग्रा बीज) से शोधित करते हैं जिससे आर्द्र गलन बीमारी से बचाया जा सके।

एक अच्छी पौधशाला तैयार करने एवं आर्द्र गलन नामक बीमारी से बचाने के लिये *ट्राइकोडर्मा विरिडी* 2.5 किग्रा प्रति हेक्टेयर के हिसाब से पौधशाला में डालना चाहिए।

खेत की तैयारी

200–250 क्विंटल गोबर की सड़ी खाद मिट्टी में मिलाई जाती है पौध को खेत में रोपने से पहले इसके साथ 200 ग्राम केल्सियम अमोनियम नाईट्रेट, 100 किग्रा यूरिया, 300 किग्रा सिंगल सुपर फास्फेट और 100 किग्रा पोटाश मिट्टी में

मिलाना चाहिए। इसके बाद जमीन को समतल कर लेना चाहिए।

पौध रोपण

पौध 15 सेमी लाईन से लाईन की दूरी और 10 सेमी पौध से पौध की दूरी पर रोपना चाहिए। खरीफ में पौधरोपण अगस्त के महीने में करते हैं जबकि रबी में मध्य दिसम्बर से लेकर मध्य जनवरी तक करते हैं। पौध रोपण के बाद एक बार हल्की सिंचाई कर देते हैं।

पौध की देख–रेख

प्याज एक उथली जड़ वाली फसल है अतः इसमें दो से तीन बार खरपतवार निकालने और हल्की गुड़ाई की आवश्यकता होती है। शुरूआत में खरपतवारनाशक जैसे पेन्डीमेथालीन 3.3 लीटर को 800 लीटर पानी में मिलाकर पौध रोपण से पहले छिड़काव करने से खरपतवार नष्ट हो जाते हैं।

सिंचाई

बलुई मिट्टी में हर तीसरे दिन सिंचाई करनी चाहिए। बल्ब बनने के समय सिंचाई की दर बढ़ा देनी चाहिए। रबी में जब प्याज का ऊपरी भाग पत्ती का पक जाए तब सिंचाई बन्द कर देनी चाहिए जबकि खरीफ में खुदाई के 10 दिन पहले सिंचाई बन्द कर देनी चाहिए।

कीट नियन्त्रण

थ्रिप्सः यह प्याज का प्रमुख कीट है जो आकार में छोटा हल्के पीले रंग का होता है। यह प्रायः पत्तियों की निचली सतह पर पाया जाता है। यह कीट पत्तियों का रस चूसता है, जिससे पत्तियों पर सफेद चमकदार धब्बे बन जाते हैं तथा पत्तियां मुड़ जाती है, इसके साथ साथ पत्तियों की वृद्धि रूक जाती है। पत्तियां सूखकर नष्ट हो जाती हैं। परिणामस्वरूप कंद आकार में छोटे रह जाते है और उत्पादन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

इस कीट के नियंत्रण के लिए इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस एल 0.4–0.5 मिली दवा प्रति लीटर पानी में मिलाकर कीट दिखाई देते ही छिड़काव करना चाहिए। आवश्यकतानुसार 10–15 दिन बाद पुनः छिड़काव करना चाहिए।

प्याज का मेगटः यह कीट सफेद रंग का होता है जो कि जड़ों के माध्यम से कंदों में प्रवेश कर जाता है। यह मुलायम भाग को ग्रसित कर देता है जिससे पौधा पीला–भूरा सा होने लगता है तथा बाद में सूख जाता है। प्रभावित कंद भण्डारण करने पर धीरे–धीरे सड़ने लगते हैं।

इस कीट के नियंत्रण के लिए बुवाई के समय भूमि में क्लोरोपाइरीफॉस पाउडर 2 प्रतिशत 20–25 किग्रा प्रति हेक्टेयर अन्तिम जुताई के समय देना चाहिए।

रोग नियन्त्रण

बैंगनी धब्बा रोगः यह रोग *अल्टरनेनिया पोरी* नामक कवक से फैलता है। यह प्याज का प्रमुख रोग है तथा इसका प्रकोप पहले पत्तियों पर दिखाई देता है। रोगग्रस्त पौधों में सफेद छोटे धसे हुए भूरे रंग के धब्बे बनते है जिनका मध्य भाग बैंगनी रंग का होता है। यह धब्बे शीघ्र ही बढ़ते है तथा धब्बों की सीमायें लाल रंग की होती हैं और ये पीले रंग की सीमाओं से घिरे रहते हैं। ग्रसित पौधों की पत्तियां तथा तना झुलसने लगते हैं तथा बाद में संपूर्ण पौधा झुलसा हुआ दिखाई देता है। प्याज का मध्य भाग बैंगनी रंग का हो जाता है जो बाद में तीव्रता से बड़ा हो जाता है। प्याज के संक्रमित कंद सड़ जाते हैं।

इन्डोफिल एम–45 का (2 से 2.5 ग्राम/लीटर) के हिसाब से छिड़काव करें। पहला छिड़काव बीमारी के दिखाई देने पर तथा दूसरा छिड़काव 15 दिन के बाद करना चाहिए।

6. लहसुन

लहसुन (*एलियम सेटाइवम*) औषधीय गुणों से भरपूर होने के कारण इसके निर्यात से अपार विदेशी मुद्रा अर्जन की प्रबल संभावनाऐं हैं। लहसुन रबी मौसम में उगाए जाने वाली प्रमुख नगदी फसल है। इसकी हरी पत्तियां भी सुगंधित एवं स्वादिष्ट होती है, जिन्हें कूटकर चटनी तथा कतर कर अचार बनाया जाता है। इसका सर्वाधिक उपयोग मसाले तथा औषधि के रूप में ही किया जाता है। लहसुन रस में उपस्थित एलिसिन मनुष्यों के खून में कोलेस्ट्राल की मात्रा कम करता है। अधिक रक्तचाप वाले रोगियों के लिए इसका सेवन विशेष रूप से लाभकारी पाया गया है। इसके अलावा एंटिसेप्टिक रूप में भी इसकी कई विशेषताऐं हैं। लहसुन रस में पायें जाने वाले एलिसीन डाइएलिल डाइसल्फाईड रसायानों के कारण इसमें एंटी बैक्टीरिया नामक गुण भी पाए जाते हैं।

जलवायु और मृदा

सामान्यतः भारत में लहसुन विविध वातावरण में उत्पादित किया जाता है। लहसुन को समुद्रतल से 1000–1300 मीटर उंचाई तक आसानी से लगाया जा सकता है। लहसुन एक पाला सहनशील फसल है जिसको वृद्धि काल मे ठण्डी तथा नम एवं पकते समय सामान्यतः शुष्क जलवायु की आवश्यकता होती है इसके लिए मध्यम गर्म तथा ठण्डे वातावरण की आवश्यकता होती है। आमतौर पर लहसुन हर प्रकार की मृदाओं में लगाया जा सकता है। परन्तु मध्यम काली दुमट मृदा जिसमें जीवांश प्रदार्थ तथा पोटाश प्रचुर मात्रा में उपलब्ध हो साथ ही जहां जल निकास व्यवस्था सुचारू हो, तथा पी.एच. मान 6 से 7 के बीच हो ऐसी मृदायें लहसुन के लिए अच्छी होती है।

भूमि की तैयारी

लहसुन उत्पादन में भूमि की तैयारी का विशेष महत्व है। भूमि तैयार करने के लिए ट्रैक्टर या देशी हल की सहायता से भूमि की हल्की जुताई करें क्योंकि लहसुन की जड़ें भूमि में 10–12 सेमी से अधिक गहरी नहीं जाती हैं। इसके बाद भूमि को भुरभुरा बनायें और पाटा चलाकर खेत समतल कर लें। इस प्रकार तैयार खेत में अपनी सुविधानुसार उचित आकार की क्यारियां और सिंचाई की नालियां बना लें।

प्रमुख किस्में

एग्रीफाउण्ड सफेद (जी–41), यमुना सफेद (जी–1), यमुना सफेद–2 (जी–50), जी–282, एग्रीफाउण्ड पार्वती (जी–313)

खाद एवं उर्वरक

इसकी अच्छी पैदावार लेने के लिए 150–200 क्विंटल/ हेक्टेयर सड़ी हुई गोबर की खाद को खेत की अंतिम तैयारी के समय भूमि में मिला देना चाहिये। इसके अलावा 100 किग्रा नत्रजन, 60 किग्रा फास्फोरस, 50 किग्रा पोटाश एवं 60 किग्रा गंधक/ हेक्टेयर देना चाहिए। नत्रजन की एक तिहाई तथा फास्फोरस व पोटाश की पूरी मात्रा बुवाई के पूर्व दें। शेष नत्रजन को दो बराबर भागों में बुवाई के 20–25 एवं 40–45 दिन बाद देना लाभदायक होता है।

लहसुन की उत्पादन वृद्धि में सूक्ष्म तत्वों का भी महत्वपूर्ण योगदान होता है। बोरेक्स का 10 किग्रा/ हेक्टेयर की दर से उपयोग कंदों का आकार तथा उत्पादन को बढ़ाता है।

बुवाई का समय

इसकी खेती विभिन्न क्षेत्रों में अलग अलग समय पर की जाती है। उत्तरी भारत के मैदानों और निचले पहाड़ी क्षेत्रों में इसे सितम्बर–नवम्बर में लगाया जाता है। जबकि मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र, कर्नाटक, राजस्थान, गुजरात और आंध्रप्रदेश में इसे अक्टूबर–नवंबर में लगाया जाता है।

बीज दर

लहसुन की बुवाई इसकी कलियों के द्वारा होती है। प्रत्येक कंद में औसतन 15–20 कलियां होती है। बुवाई से पूर्व कलियों को सावधानी पूर्वक अलग कर लें परंतु ध्यान रखें की कलियों के ऊपर की सफेद पतली झिल्ली को नुकसान न हो। बुवाई के लिए 8–10 मिमी आकार की रोगरहित सुगठित और बड़े आकार की कलियों का ही चुनाव करें। बुआई से पूर्व कलियों को फफूंदनाशक दवा जैसे कार्बण्डाजिम (2–2.5 ग्राम प्रति लीटर पानी) के घोल में दो मिनट तक डुबोकर उपचारित करें। एक हेक्टेयर क्षेत्र के लिए लगभग 5.0 क्विंटल कलियों की आवश्यकता होती है। तैयार क्यारियों में 10–15 सेमी दूरी पर लाइनें बना लें इन लाईनों में 8–10 सेमी दूरी पर कलियों की बुवाई करें।

सिंचाई

लहसुन एक उथली जड़ वाली फसल है जिसकी अधिकांश जड़ें भूमि की उपरी सतह पर फैली रहती है। जहां से वे अपनी आवश्यकतानुसार पानी व अन्य पोषक तत्वों को ग्रहण करती है। अतः इस बात का ध्यान रखना चाहिये कि प्रत्येक सिंचाई में मृदा के इस स्तर में नमी की कमी न हो। लहसुन की बुवाई के तुरंत बाद सिंचाई अवश्य करना चाहिये ताकि कलियों का अंकुरण अच्छा हो सकें। ध्यान रखें की पौधों की प्रारंभिक अवस्था में भूमि में नमी की कमी न हो वरना पौधों की वृद्धि पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। लहसुन के कंद पक जायें पत्तियां पीली हो जायें तब सिंचाई बंद कर देनी चाहिए। इसमें अंतिम सिंचाई फसल खुदाई के तीन चार दिन पूर्व करनी चाहियें ताकि कंदों की खुदाई में आसानी हो और उन्हें कोई हानि न पहुंचे।

खरपतवार नियंत्रण

खेत को खरपतवार रहित रखने के लिए पहली निराई–गुड़ाई बुवाई के 20–25 दिन बाद तथा दूसरी 40–45 दिन बाद करनी चाहिये। यह फसल काफी सघन बोई जाती है अतः हाथ व यांत्रिक नियंत्रण में काफी कठिनाई आती है।

- पेन्डीमेथालीन 3.3 लीटर/ हेक्टेयर सक्रिय तत्व को लहसुन की बुवाई के एक दिन बाद डालने से खरपतवार नियंत्रित होते हैं तथा कंदों की अच्छी उपज प्राप्त होती है।
- ऑक्सीडायजन 1 किग्रा/ हेक्टेयर का अंकुरण पूर्व प्रयोग करने से नियंत्रण अच्छा होता है।

खुदाई

लहसुन के कंद 150–160 दिन में खोदने वाले हो जाते है। इसका पौधा जब ऊपर से सूखकर झुकने या गिरने लगता है, तो यही अवस्था लहसुन की खुदाई के लिए उपयुक्त होती है। इस अवस्था में प्राप्त कंद अच्छी गुणवत्ता वाले होते हैं यदि खुदाई में देर हो तब कंद फैलने लगते हैं तथा कुछ किस्मों में तो पुनः अंकुरण तक देखा गया है इसलिये लहसुन की सही समय पर खुदाई करने से गुणवत्तायुक्त कंदों का उत्पादन करता है।

कीट नियन्त्रण

थ्रिप्सः यह लहसुन का सबसे खतरनाक कीट है जो कि आकार में छोटा हल्के पीले रंग का होता है। यह प्रायः पत्तियों की निचली सतह पर पाया जाता है। यह कीट पत्तियों का रस चूसता है, जिससे पत्तियों पर सफेद चमकदार धब्बे बन जाते

हैं तथा पत्तियां मुड़ जाती हैं, इसके साथ साथ पत्तियों की वृद्धि रूक जाती है। पत्तियां सूखकर नष्ट हो जाती हैं। परिणामस्वरूप कंद आकार में छोटे रह जाते हैं और उत्पादन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

नियंत्रण के लिए इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस एल 0.4–0.5 मिली दवा प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करना चाहिए। आवश्यकतानुसार 10–15 दिन बाद पुनः छिड़काव करना चाहिए।

प्याज का मेगट: यह कीट सफेद रंग का होता है जो कि जड़ों के माध्यम से कंदों में प्रवेश कर जाता है। यह कीट मुलायम भाग को ग्रसित कर देता है जिससे पौधा पीला भूरा सा होने लगता है तथा बाद में सूख जाता है। प्रभावित कंद भण्डारण करने पर धीरे–धीरे सड़ने लगते हैं।

इस कीट के नियंत्रण के लिए बुवाई के समय भूमि में क्लोरोपाइरीफॉस पाउडर 2 प्रतिशत 20–25 किग्रा प्रति हेक्टेयर अन्तिम जुताई के समय खेत में डालना चाहिए।

रोग नियन्त्रण

बैंगनी धब्बा रोग: यह रोग *अल्टरनेनिया पोरी* नामक कवक से फैलता हैं। इस रोग का प्रकोप लहसुन की पत्तियों पर दिखाई देता है। रोगग्रस्त पौधों में सफेद छोटे धसे हुए भूरे रंग के धब्बे बनते हैं जिनका मध्य भाग बैंगनी रंग का होता है। यह धब्बे शीघ्र ही बढ़ते हैं, धब्बों की सीमायें लाल रंग की होती हैं और ये पीले रंग की सीमाओं से घिरे रहते हैं। ग्रसित पौधों की पत्तियों तथा तना झुलसने लगते हैं तथा बाद में संपूर्ण पौधा झुलसा हुआ दिखाई देता है।

इसकी रोकथाम के लिए लहसुन की कलियों की बुवाई करने के पूर्व कार्बण्डाजिम दवा (1.0 ग्राम/ लीटर पानी) में 3 से 5 मिनट तक डुबोकर उपचारित करें। खड़ी फसल पर ताम्रयुक्त दवा जैसे कॉपर ऑक्सीक्लोराइड (2 ग्राम दवा/ लीटर पानी) का छिड़काव करें।

7. भिण्डी

भिण्डी (*एबलमोस्कस एस्कुलेंटस*) एक ग्रीष्मकालीन और वर्षाकालीन फसल है। भिण्डी के उत्पादन में भारत का स्थान सम्पूर्ण विश्व में प्रथम है। भारत में लगभग सभी राज्यों में भिण्डी की खेती की जाती है।

जलवायु

भिण्डी गर्मी तथा खरीफ मौसम की मुख्य सब्जी फसल है। यह 40° सेल्सियस से ज्यादा तापमान सहन नहीं कर सकती है। बीज जमाव के लिए उपयुक्त तापमान 17–20° सेल्सियस है तथा पौधों की बढ़वार के लिए 35° सेल्सियस तक तापमान उपयुक्त है।

मृदा

भिण्डी की खेती के लिए पोषक तत्वों से भरपूर तथा 6.0–6.8 पी.एच. मान वाली दुमट व बलुई दुमट मिट्टी उपयुक्त रहती है। सिंचाई की सुविधा व जल निकास का अच्छा प्रबन्ध होना चाहिए। वर्षा ऋतु के समय पहली वर्षा होने पर खेत को मिटटी पलटने वाले हल से दो बार अच्छी तरह से जुताई करना चाहिए। इसके पश्चात दो बार डिस्क हैरो या देसी हल से पुनः जुताई कर पाटा चलाये। 250 क्विंटल अच्छी सड़ी गली हुई गोबर की खाद प्रति हेक्टेयर की दर से अंतिम जुताई से पहले फैला देना चाहिए ताकि मिट्टी में अच्छी तरह से मिल जाये। सिंचाई की सुविधा होने पर इस फसल को वर्षा ऋतु से 20–25 दिन पहले ही बुआई कर देनी चाहिए ताकि बाजार भाव अच्छा मिल सके।

किस्में

पूसा सावनी, पूसा ए–4, परभनी क्रांति, अर्का अनामिका, हिसार नवीन, काशी भैरव, काशी मोहिनी

बीज की मात्रा व बुवाई का समय

गर्मी के मौसम के लिए 20–22 किग्रा व खरीफ (वर्षा) के मौसम में 10–12 किग्रा/ हेक्टेयर की आवश्यकता होती है। संकर किस्मों के लिए 5 किग्रा प्रति हेक्टेयर की बीज दर पर्याप्त होती है। गर्मी के मौसम में 20 फरवरी से 15 मार्च तथा खरीफ (वर्षा के मौसम) में 25 जून से 10 जुलाई तक का समय बुवाई के लिए उपयुक्त है।

बुवाई की विधि

बीज की बुवाई सीड ड्रिल के द्वारा गर्मियों में 45 सेमी कतार से कतार के बीच की दूरी तथा 20 सेमी पौधे से पौधे के बीच की दूरी पर करनी चाहिए। वर्षा के मौसम में 60 x 20 सेमी की दूरी पर बुवाई करें। बीज की गहराई लगभग 3–4 सेमी रखना चाहिए।

खाद और उर्वरक

बुवाई से पहले अच्छी तरह सड़ी गली गोबर की खाद लगभग 200–250 क्विंटल प्रति हेक्टेयर की दर से मिट्टी में अच्छी तरह मिला दें। नत्रजन 40 किग्रा की आधी मात्रा, 50 किग्रा फास्फोरस व 60 किग्रा पोटाश प्रति हेक्टेयर की दर से अंतिम जुताई के समय प्रयोग करें तथा बची हुई आधी नत्रजन की मात्रा फसल में फूल आने की अवस्था में डालें।

सिंचाई

सिंचाई मार्च में 10–12 दिन, अप्रैल में 7–8 दिन और मई–जून में 4–5 दिन के अन्तर पर करना चाहिए। बरसात में यदि बराबर वर्षा होती है तो सिंचाई की आवश्यकता नहीं पड़ती है।

अंतर–सस्य क्रियाएँ

नियमित निराई–गुड़ाई कर खेत को खरपतवार मुक्त रखना चाहिए। बोने के 15–20 दिन बाद प्रथम निराई–गुडाई करना जरुरी रहता है। खरपतवारनाशी फ्लुक्लोरेलिन की 1.0 किग्रा सक्रिय तत्व मात्रा को प्रति हेक्टेयर की दर से पर्याप्त नम खेत में बीज बोने के पूर्व मिलाने से प्रभावी खरपतवार नियंत्रण किया जा सकता है।

तुड़ाई व उपज

भिण्डी की फलियों को उनकी अपरिपक्व अवस्था में फूल खिलने से 3–4 दिन बाद 3 दिन के अंतराल पर लगातार तोड़ते रहना चाहिए। गर्मी की फसल में 90–100 क्विंटल तथा वर्षा के मौसम में 150 से 175 क्विंटल उपज प्रति हेक्टेयर की दर से मिलती है।

कीट नियन्त्रण

सफेद मक्खी: पत्तियों का रस चूसने से पत्तियां सिकुड़ जाती हैं। इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस एल 0.4–0.5 मिली दवा प्रति लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें।

फली तथा तना भेदक: फलियों में छेद कर अंदर बीज को हानि पहुंचाता है जिससे फली खाने योग्य नहीं रहती है। पौधों की अंतिम शिरा में छेद करता है जिससे पौधों का ऊपरी हिस्सा मुरझा जाता है। थायोमेथोक्जाम 70 डब्लू एस 0.4–0.5 मिली दवा प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करना चाहिए।

जैसिड: यह कीट पत्तियों का रस चूसता है जिससे पत्तियां किनारों पर ऊपर की तरफ मुड़ जाती हैं तथा पत्तियों का रंग पीला हो जाता है जो बाद में सूख जाती हैं। इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस एल 0.4–0.5 मिली दवा प्रति लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करना चाहिए।

रोग नियन्त्रण

मोजेक तथा पर्ण कुंचन: पत्तियों पर छोटे–छोटे पीले रंग के चितकबरे धब्बे बनते हैं। पत्तियों का रंग पीला पड़ जाता है। हरा भाग छिछले गड्ढों का रूप ले लेता है, पत्तियों के किनारे नीचे झुक जाते हैं और कटे हुए से हो जाते हैं तथा बाद में पत्तियों के पीले भाग सूख कर नष्ट हो जाते हैं। इमिडाक्लोप्रिड (0.3 मिली प्रति लीटर पानी की दर से) बुवाई के 20 दिन बाद तथा आवश्यकतानुसार 15 दिन के अंतराल पर छिड़काव करें।

पीत शिरा मोजेक: पत्तियाँ और फल पीले पड़ जाते हैं। पत्तियाँ चितकबरी होकर प्यालेनुमा आकार की हो जाती हैं। इस रोग का संचार सफेद मक्खी नामक कीट से होता है। फूल आने से पहले तथा फूल आने के बाद इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस एल 0.4–0.5 मिली दवा प्रति लीटर पानी के हिसाब से छिड़काव करना चाहिए। आवश्यकतानुसार यह छिड़काव 10 दिन के अंतराल पर करें।

चूर्णिल आसिता: पत्तियों पर सफेद चूर्णी धब्बे दिखाई देते है तथा रोग ग्रसित पत्तियाँ पीली पड़कर झड़ जाती हैं। केराथेन (0.2%) का छिड़काव 15 दिन के अंतराल पर या सल्फर 25 किग्रा प्रति हेक्टेयर का भुरकाव करना चाहिए।

8. मटर

मटर का (*पाईसम सेटाइवम* उपजाति *होर्टेन्स*) शीतकालीन सब्जियो में एक प्रमुख स्थान है। इसकी खेती हरी फली (सब्जी), साबुत मटर, एवं दाल के लिये किया जाता है। आजकल मटर की डिब्बाबंदी भी काफी लोकप्रिय है। इसमे प्रचुर मात्रा मे प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट, फास्फोरस, रेशा, पोटेशियम एवं विटामिन्स पाया जाता है। स्वाद एवं पौष्टिकता की दृष्टि से दलहनी फसलो मे से मुख्य फसल है। देश भर मे इसकी खेती व्यावसायिक रूप से की जाती है।

जलवायु

यह ठंडी व नम जलवायु चाहने वाली फसल है। बीज अंकुरण के लिये औसत 22° सेल्सियस एवं अच्छी वृद्धि एवं विकास के लिये 10–18° सेल्सियस तापमान की आवश्यकता होती है। यदि फलियों के निर्माण के समय गर्म या शुष्क मौसम हो जाये तो मटर के गुणो एवं उत्पादन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

मृदा

मटर हेतु उचित जल निकास वाली, जीवांश पदार्थ युक्त दोमट तथा हल्की दोमट भूमि उपयुक्त होती है।

किस्में

आर्केल, पूसा प्रभात, जवाहर मटर–4, आजाद पी–1, बोनविला, पंजाब–88

बुवाई का समय

अक्टूबर के मध्य से नवम्बर के मध्य तक हल के पीछे 20 सेमी (बौनी) व 30 सेमी (लम्बी प्रजाति) की दूरी पर करनी चाहिए। सीड ड्रिल द्वारा मटर की बुवाई की जा सकती है।

बीज की मात्रा व बुवाई

80–100 किग्रा/ हेक्टेयर तथा बौनी प्रजातियों के लिए 125 किग्रा/ हेक्टेयर बीज की आवश्यकता होती है। बीज जनित रोग से बचाव के लिए 2 ग्राम थिरम या 3 ग्राम इंडोफिल एम–45 या 4 ग्राम ट्राइकोडरमा अथवा 2 ग्राम थिरम+1 ग्राम कार्बण्डाजिम प्रति किग्रा बीज की दर से बीज बोने के पूर्व शोधित करना चाहिए। बीज शोधन कल्चर द्वारा उपचारित करना चाहिए। एक पैकेट (200 ग्राम) राइजोबियम कल्चर से 10 किग्रा बीज की उपचारित करके बोना चाहिए। पी.एस.बी. कल्चर अवश्य प्रयोग करना चाहिए।

इसकी बुवाई हल के पीछे कूड़ों में या सीड ड्रील द्वारा की जाती है। पौधों की आपस मे दूरी 10 सेमी एवं कतार से कतार की दूरी 30 सेमी रखना चाहिये।

खाद और उर्वरक

नत्रजनः 20 किग्रा/ हेक्टेयर, फास्फोरसः 60 किग्रा/ हेक्टेयर, पोटाशः 40 किग्रा/ हेक्टेयर, गन्धकः 20 किग्रा/ हेक्टेयर, मोलिब्डेनमः 1

किग्रा/ हेक्टेयर, गोबर की खादः 60 क्विंटल/ हेक्टेयर। बौनी प्रजातियों के लिए 20 किग्रा नत्रजन बुवाई के समय अतिरिक्त दिया जाता है। रतुआ के नियंत्रण हेतु 0.1% जिंक सल्फेट का प्रयोग करें।

सिंचाई

जाड़े में वर्षा न हो तो फूल आने के समय एक सिंचाई करना चाहिए। दाना भरते समय दूसरी सिंचाई लाभप्रद होती है।

अंतर–सस्य क्रियाएं

मटर की फसल की निराई गुडाई–आवश्यकता अनुसार करनी चाहिए। पेंडीमेथालीन 3.3 लीटर/ हेक्टेयर की दर से बुवाई के तुरन्त बाद छिड़काव करना चाहिए।

तुड़ाई एवं उपज

इसकी फलियों की तुड़ाई किस्मों एवं फलियों के उपयोग पर निर्भर करती है। सामान्यतः अगेती किस्में बुवाई के 60–65 दिन बाद एवं मध्यम किस्में बुवाई के 85–90 दिनों बाद एवं पछेती किस्में बुवाई के 100–110 दिन बाद पहली तुड़ाई के लिए तैयार हो जाती है। फलियों की 7–10 दिन के अंतराल पर 3–4 बार तुड़ाई करनी चाहिये। फसल पूर्ण पकने पर कटाई करनी चाहिए। साफ सुथरे खलियान में इसकी मड़ाई करके दाना निकालना चाहिए।

हरी फलियों की उपज अगेती किस्मों से 30–40 क्विंटल/ हेक्टेयर, मध्यम किस्मों से 60–75 क्विंटल/ हेक्टेयर तथा पछेती किस्मों से 80–100 क्विंटल/ हेक्टेयर प्राप्त होती है।

कीट नियन्त्रण

तने की मक्खीः यह गहरे काले रंग की घरेलू मक्खी की तरह होती है। इसका प्रकोप बोई हुई मटर की फसल में अधिक होता है। इसका प्रकोप फसल उगने के साथ से ही शुरू हो जाता है। नवजात गिडारें पत्तियों से होते हुए तने में सुरंग बनाकर अन्दर घुस जाते है। जिसके फलस्वरूप प्रकोपित पौधे पीले पड़ कर सुख जाते हैं। डाइमिथोइट 30 ईसी 1.5–2.0 मिली प्रति लीटर पानी में छिड़काव करना चाहिए।

पत्ती में सुरंग बनाने वाला कीटः पूर्ण विकसित गिडार मटमैले सफेद रंग की होती है। नवजात गिडारें पत्तियों में इपीडर्मिस के नीचे सुरंग बनाकर पत्तियों को खाती है। जिसके फलस्वरूप प्रकोपित पत्तियों में सफेद रंग की टेढ़ी मेढ़ी रेखाएं बन जाती हैं। इसके आक्रमण के कारण प्रकाश संश्लेषण की क्रिया में बाधा उत्पन्न होती है। मेलाथियान 50 ई सी 1.5–2.0 मिली प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करें।

फली भेदक कीटः यह भूरे रंग का पतंगा होता है जिसके उपरी पंख पर सफेद पीली धारियां होती हैं तथा पिछले पंख के किनारों पर गहरी पारदर्शी लाइन पायी जाती है। पूर्ण विकसित सूंडी गुलाबी रंग की होती हैं। कीट की गिडारें फलियों में बन रहे दानों को खाकर नुकसान पहुंचाती हैं। प्रकोपित फलियाँ रंगहीन, पानीयुक्त तथा दुर्गन्ध युक्त हो जाती हैं। मेलाथियान 50 ई सी 1.5–2.0 मिली प्रति लीटर पानी की दर से पौधों की कली अवस्था में छिड़काव करें।

रोग नियन्त्रण

चूर्णिल आसिताः बचाव के लिए फसल के लिये नियमित निगरानी रखनी चाहिए तथा रोग की शुरुआती अवस्था दिखाई देते ही उचित कवकनाशी का छिड़काव करना चाहिए। चूर्णिल आसिता के

प्रबंधन हेतु गंधक चूर्ण की 2.5 ग्राम मात्रा/ लीटर पानी की दर से 10 दिन के अन्तराल पर आवश्यकतानुसार 2–3 छिड़काव करना चाहिए।

मृदुरोमिल आसिताः बचाव के लिए फसल के लिये नियमित निगरानी रखनी चाहिए तथा रोग की प्रारम्भिक अवस्था दिखाई देते ही उचित कवकनाशी का प्रयोग करना चाहिए। इंडोफिल एम–45 की 2.5 ग्राम मात्रा/ लीटर पानी की दर से फसल पर 2–3 बार 10 दिन के अन्तराल पर आवश्यकतानुसार छिड़काव करना चाहिए।

मूल व तना विगलनः भूमि जनित रोग जैसे मूल विगलन, तना विगलन तथा उकठा से बचाव के लिए बुवाई से पूर्व ट्राइकोडरमा पाउडर की 5 किग्रा मात्रा को 2.5 क्विंटल गोबर की खाद में मिलाकर भूमि को उपचारित करना चाहिए।

उकठा रोगः इस रोग की प्रारम्भिक अवस्था में पौधों की पत्तियाँ नीचे से ऊपर की ओर पीली पड़ने लगती हैं और पौधा सूख जाता है। जिस खेत में इस बीमारी का प्रकोप हुआ हो तो उसमें 3–4 वर्षों तक मटर की फसल नही बोनी चाहिए। बीज को 2.5 ग्राम कार्बण्डाजिम प्रति किग्रा बीज की दर से उपचारित करके बोना चाहिए।

९. लोबिया

लोबिया (*विगना अंगुईकुलेटा*) एक महत्वपूर्ण सब्जी फसल है। इसकी खेती मैदानी क्षेत्रों में फरवरी से अक्टूबर तक सफलतापूर्वक की जाती है। दलहनी फसल होने के कारण यह वायुमण्डलीय नत्रजन को भूमि में संचित करती है जिससे जमीन की उर्वरता बढ़ती है एवं आगामी फसल को इस नत्रजन का लाभ मिलता है। लोबिया प्रोटीन के लिहाज से एक उत्तम फसल है तथा इसकी खेती दानें, सब्जी (हरी फली), चारे एवं हरी खाद के लिये की जाती है। कुपोषण दूर करने के लिए शाकाहारी भोजन में लोबिया का उपयोग बहुत महत्वपूर्ण है क्योंकि इसमें अन्य हरी सब्जियों की तुलना में प्रोटीन, फास्फोरस एवं कैल्शियम की मात्रा अधिक होती है। इसकी खेती मक्का, बाजरा, ज्वार या दलहनी फसलों के साथ सह–फसली खेती के रूप में की जा सकती है।

जलवायु

अधिक ठंड की अवधि नबम्बर–दिसम्बर एवं जनवरी महीने छोड़कर साल में बाकी समय का मौसम लोबिया की खेती के लिए उपयुक्त है।

मृदा

दोमट भूमि उपयुक्त होती है। खेत समतल तथा उचित जल निकास वाला होना चाहिये। एक जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से करके दो जुताई देशी हल अथवा कल्टीवेटर से करनी चाहिये।

किस्में

पूसा दोफसली, पूसा कोमल, पूसा बरसाती, पूसा ऋतुराज, पूसा सुकोमल, पूसा फाल्गुनी, अर्का गरिमा, काशी कंचन, काशी श्यामल, काशी सुधा।

बीज दर व बुवाई

साधारणतया 12–20 किग्रा बीज/ हेक्टेयर की दर से पर्याप्त होता है। बीज की मात्रा प्रजाति तथा मौसम पर निर्भर करती है। बेलदार प्रजाति के लिए बीज की कम मात्रा की आवश्यकता होती है।

गर्मी के मौसम के लिए इसकी बुवाई फरवरी–मार्च में तथा वर्षा के मौसम में जून अंत से जुलाई माह में की जाती है। झाड़ीदार किस्मों के बीज की बुवाई के लिए पंक्ति से पंक्ति की दूरी 45–60 सेमी तथा बीज से बीज की दूरी 10 सेमी रखी जाती है तथा बेलदार किस्मों के लिए पंक्ति से पंक्ति की दूरी 80–90 सेमी रखते हैं। बुवाई से पहले बीज का राइजोबियम नामक जीवाणु से उपचार कर लेना चाहिए।

खाद और उर्वरक

लोबिया की अच्छी उपज के लिये 30 किग्रा नत्रजन, 50 किग्रा फास्फोरस एवं 40 किग्रा पोटाश प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग करें। उर्वरक की पूरी मात्रा को बुआई के समय बीज से 3–4 सेमी नीचे डालें। भूमि एवं पौधों की आवश्यकतानुसार जिंक सल्फेट का प्रयोग भी किया जा सकता है।

सिंचाई

बुआई के बाद आवश्यकतानुसार एक हल्की सिंचाई करना अंकुरण के लिए अच्छा रहता है। जायद के मौसम में तापक्रम बढ़ने पर प्रति सप्ताह या 10–12 दिन के अंतराल पर सिंचाई करनी चाहिए।

अंतर–सस्य क्रियाएं

बुवाई के 20–25 दिन बाद एक निराई–गुड़ाई यदि खरपतवार हो, तो करनी चाहिए। रासायनिक खरपतवार नियंत्रण के लिए पेंडीमेथालीन 3.3 लीटर/ हेक्टेयर की दर से बुवाई के बाद दो दिन के अन्दर प्रयोग करें।

तुड़ाई व उपज

लोबिया की नर्म व कच्ची फलियों की तुड़ाई नियमित रूप से 4–5 दिन के अंतराल में करें। झाड़ीनुमा किस्मों से 3–4 तुड़ाई तथा बेलदार किस्मों से 8–10 तुड़ाई की जा सकती है।

हरी फली की झाड़ीनुमा किस्मों में उपज 60–70 क्विंटल तथा बेलदार किस्मों में 80–100 क्विंटल/ हेक्टेयर हो सकती है। बीज की उपज 5–6 क्विंटल/ हेक्टेयर प्राप्त होती है।

कीट नियन्त्रण

फली भेदक कीटः पौधे के परिपक्व होते समय इस कीट के लार्वा फूलों की कलियों एवं फली मे छेदकर करके नुकसान पहुँचाते हैं।

इस कीट के नियंत्रण के लिये मेलाथियान 50 ई सी 1.5–2.0 मिली प्रति लीटर पानी की दर से पौधे की कली अवस्था मे छिड़काव करना चाहिए।

माहुः इस कीट के शिशु वृद्धि कर रहे नये पौधे की पत्तियों के रस को चूसकर हानि पहुँचाते हैं जिसके कारण पत्तियाँ सुखने तथा मुड़ने लगती हैं। पौधे की वृद्धि रूक जाती है और फली नही बन पाती है। यह कीट मोजेक विषाणु रोग को भी फैलाता है।

इसकी रोकथाम के लिये इमिडक्लोप्रिड 17.8 एस एल 0.4–0.5 मिली प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करना चाहिए।

रोग नियन्त्रण

जीवाणु अंगमारीः संक्रमित बीजों से निकलने वाले पौधों के बीज पत्रों एवं नई पत्तियों पर रोग के लक्षण सर्वप्रथम दिखाई पड़ते हैं। इस रोग के कारण बीज पत्र लाल रंग के होकर सिकुड़ जाते हैं। नई पत्तियों पर सूखे धब्बे बनते हैं। पौधों की कलिकाएं नष्ट हो जाती हैं और बढ़वार रूक जाती है। अन्त में पूरा पौधा सूख जाता है।

रोगी पौधों के अवशेषों को नष्ट कर देना चाहिए। जल निकास का उचित प्रबंध करना चाहिए। दो वर्षों का फसल चक्र अपनाना चाहिए। उपचारित बीज का प्रयोग करना चाहिए। रोग के लक्षण दिखाई देने पर कॉपर ऑक्सीक्लोराइड 2.0 ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करना चाहिए।

मोजेकः रोगी पत्तियां हल्की पीली हो जाती हैं। इस रोग में हल्के पीले तथा हरे रंग के दाग भी बनते हैं। रोग की उग्र अवस्था में पत्तियों का आकार छोटा हो जाता है और उन पर फफोले सदृष उभार आ जाते हैं। रोगी फलियों के दाने सिकुड़े हुए होते हैं तथा कम बनते हैं। यह विषाणु रोग माहु कीट द्वारा फैलता है।

रोगी पौधों को उखाड़ कर नष्ट कर देना चाहिए। रोगरहित पौधों से प्राप्त बीज को ही बीज उत्पादन के काम में लाना चाहिए। माहु के नियंत्रण हेतु कीटनाशी जैसे इमिडक्लोप्रिड 17.8 एस एल 0.4–0.5 मिली प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करना चाहिए।

10. ग्वार फली

ग्वार (*साइमोप्सिस टेट्रागोनोलोबस*) लेग्युमिनेसी कुल की खरीफ ऋतु में उगाई जाने वाली एकवर्षीय फसल है। इसका पौधा बहु–शाखीय व सीधा बढ़ने वाला होता है। ग्वार की खेती कम वर्षा और विपरीत परिस्थितियों वाली जलवायु में भी आसानी की जा सकती है। कम सिंचाई वाली परिस्थितियों में भी इसकी खेती सफलतापूर्वक की जा सकती है। हरी फलियों के 100 ग्राम भाग में 81.0 ग्राम पानी, 3.2 ग्राम प्रोटीन, 0.4 ग्राम वसा, 1.4 ग्राम खनिज, 3.2 ग्राम रेशा और 10.8 ग्राम कार्बोहाइड्रेट पाया जाता है। इसके अतिरिक्त हरी फलियों में कैल्शियम (130 मिग्रा), फास्फोरस (57 मिग्रा), लोहा (1.08 मिग्रा) तथा विटामिन 'ए', थाइमिन, फोलिक अम्ल और विटामिन 'सी' इत्यादि भी इसमें पाए जाते हैं।

जलवायु

ग्वार एक सूखा सहन करने वाली व गर्म जलवायु की फसल है। यह उन क्षेत्रों में आसानी से उगाया जा सकता है जहां पर औसत वार्षिक वर्षा 30–40 सेमी तक होती है। शुष्क और अर्ध–शुष्क दोनों परिस्तिथियों में इसकी खेती आसानी से की जा सकती है।

मृदा

ग्वार की खेती के लिए उचित जल निकास वाली दोमट व बलुई दोमट मिट्टी सर्वोत्तम रहती है। हल्की क्षारीय व लवणीय भूमि जिसका पी.एच. मान 7.5 से 8.5 तक हो ग्वार की खेती आसानी से की जा सकती है। ग्वार उन मृदाओं में भी आसानी से उगायी जा सकती है जहां दूसरी फसलें उगाना अत्यधिक कठिन है।

किस्में

थार भादवी, गोमा मंजरी, पूसा सदाबहार, पूसा मौसमी, पूसा नवबहार

बुवाई का समय एवं बीज दर

मार्च का प्रथम पखवाड़ा उपयुक्त समय है। देरी से बुवाई करने पर पैदावार पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है जबकि वर्षा ऋतु की फसल की बुवाई के लिए जून–जुलाई उपयुक्त समय है। वर्षा आधारित क्षेत्रों में जुलाई में वर्षा आगमन के साथ ही ग्वार की बुवाई कर देनी चाहिए। दाने एवं हरी फलियों के लिए 15 से 18 किग्रा बीज प्रति हेक्टेयर पर्याप्त होता है।

बुवाई की विधि

अधिक पैदावार के लिए ग्वार की बुवाई हमेशा पंक्तियों में करनी चाहिए। बुवाई हल के कुड़ों में अथवा सीड ड्रिल की सहायता से करें। ग्वार की बुवाई पंक्ति से पंक्ति की दूरी 45–50 सेमी तथा पौधे से पौधे की दूरी 10–15 सेमी पर करनी चाहिए। बुवाई के समय भूमि में पर्याप्त नमी होनी चाहिए जिससे बीज का जमाव शीघ्र व पर्याप्त मात्रा में हो सके।

खाद और उर्वरक

फसल की प्रारम्भिक अवस्था में पोषक तत्वों की पूर्ति के लिये 20 किग्रा नत्रजन व 40 किग्रा फास्फोरस प्रति हेक्टेयर पर्याप्त रहता है। सम्पूर्ण नत्रजन एवं फास्फोरस की मात्रा बुवाई के समय खेत में डाल देनी चाहिए। इसके अतिरिक्त ग्वार के बीज को बुवाई से पहले राइजोबियम कल्चर की 600 ग्राम मात्रा को एक लीटर पानी व 250 ग्राम

गुड़ के घोल में 15 किग्रा बीज को उपचारित कर छाया में सुखा कर बोना लाभदायक रहता है। खेत की तैयारी के समय 50 क्विंटल गोबर या कम्पोस्ट खाद भी मिला देना चाहिए।

सिंचाई

खरीफ ऋतु में बोयी फसल में सिंचाई की कोई आवश्यकता नहीं होती है। यदि बुवाई के पश्चात अच्छी वर्षा न हो तथा जहाँ सिंचाई की सुविधा हो वहाँ पर कम से कम 3 सिंचाई करनी चाहिए। ग्रीष्मकालीन फसल में आवश्यकतानुसार 6–7 दिनों के अंतराल पर सिंचाई करते रहना चाहिए।

अंतर–सस्य क्रियाएं

ग्वार की फसल में समय–समय पर निराई–गुड़ाई कर खरपतवारों को निकालते रहना चाहिए। इससे पौधे की जड़ों का विकास भी अच्छा होता है तथा जड़ों में वायु संचार भी बढ़ता है।

तुड़ाई एवं उपज

सब्जी वाली फसल में फलियों को मुलायम अवस्था में ही हाथों से तोड़ लेना चाहिए। सब्जी वाली फसल में 55 से 70 दिनों बाद फलियां तुड़ाई के लिए तैयार हो जाती हैं। नर्म, कच्ची व हरी फलियों की तुड़ाई पांच दिनों के अंतराल पर नियमित रूप से करते रहना चाहिए। बीज वाली फसल के लिए ग्वार को 90–120 दिन या फली के अंदर दाने का तथा फली का रंग बदलने लग जाये तो उसकी कटाई कर लेनी चाहिए।

ग्वार की फसल से 250–300 क्विंटल हरा चारा, 12–18 क्विंटल दाना और 70 से 120 क्विंटल हरी फलियां प्रति हेक्टेयर प्राप्त कर सकते हैं। यद्धपि ग्वार फली की उपज मौसम, किस्म, मृदा के प्रकार और सिंचाई सुविधाओं पर निर्भर करती है।

कीट नियंत्रण

दीमकः फसल की जड़ों को खाकर नुकसान पहुंचाती है। बुवाई से पहले अंतिम जुताई के समय खेत में क्लोरोपाइरीफॉस पाउडर 2 प्रतिशत 20 से 25 किग्रा प्रति हेक्टेयर की दर से भूमि में मिलना चाहिये।

माहुः यह कीट पौधों के कोमल भागों का रस चूस कर फसल को हानि पहुँचाता है। इसके नियंत्रण हेतु इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस एल 0.4–0.5 मिली प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव कर देना चाहिए।

सफेद मक्खी एवं हरा तेलाः इन कीटों के नियंत्रण के लिए इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस एल 0.4–0.5 मिली प्रति लीटर पानी दर से छिड़काव करना चाहिए।

रोग नियन्त्रण

जीवाणु झुलसाः यह ग्वार की बहुत हानिकारक बीमारी है। इस बीमारी के ऊपर गोल आकार के धब्बे बनते है। इस बीमारी के नियंत्रण हेतु रोगरोधी किस्मों को उगाना चाहिए। बीज को 2 ग्राम स्ट्रेप्टोसाइक्लिन से प्रति किलो बीज की दर से उपचारित करके बोना चाहिए।

छाछियाः इस रोग के कारण पौधों के ऊपर सफेद रंग के पाउडर का आवरण बन जाता है। इस रोग के नियंत्रण हेतु 25 किग्रा गंधक चूर्ण या एक लीटर केराथेन को 500 लीटर पानी में घोल बनाकर प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करना चाहिए।

जड़ गलनः यह बीमारी भूमि में पैदा हुई फफूँद के कारण फैलती है। इस बीमारी के कारण पौधे अचानक मर जाते हैं। इस बीमारी की रोकथाम के लिये बीज को 3 ग्राम थिरम या इंडोफिल एम–45 की 2.5 ग्राम प्रति किलो बीज की दर से उपचारित करके बोना चाहिये।

11. सेम फली

सेम (*लबलब पर्पुरियस*) एक लता वाली फसल है। इसकी फलियों की सब्जी बनाई जाती है तथा पत्तियां चारे के रूप में प्रयोग की जाती हैं। इसकी अनेक किस्मे होती हैं और उसी के अनुसार फलियाँ भिन्न–भिन्न आकार की लंबी, चिपटी और कुछ टेढ़ी तथा सफेद, हरी, पीली आदि रंगों की होती है। इसके बीज भी सब्जी के रूप में खाए जाते हैं। बीज में प्रोटीन की मात्रा पर्याप्त रहती है।

जलवायु

सेम ठंडी जलवायु की फसल है। इसको 15 से 22° सेल्सियस तक तापमान की आवश्यकता होती है। यह पाले को सहन नहीं कर पाती है।

मृदा

इसके लिए उत्तम जल निकास वाली दोमट भूमि अधिक उपयुक्त रहती है। अधिक क्षारीय और अधिक अम्लीय भूमि इसकी खेती में बाधक होती है

किस्में

थार कार्तिकी, थार माघी, काशी हरितिमा, अर्का विजय

बुवाई का समय

जायद फसलः फरवरी–मार्च

वर्षाकालीन फसलः जून–जुलाई

बीज की मात्रा व बुवाई

प्रति हेक्टेयर 6–8 किग्रा बीज पर्याप्त होता है। पंक्तियों और पौधों की आपसी दूरी क्रमशः 90 सेमी और 90 सेमी रखें। यदि सेम को चौड़ी क्यारियों में बोना हो तो 1.5 मीटर की चौड़ी क्यारियां बनाएँ तथा उनके किनारों पर 50 सेमी की दूरी पर 2–3 सेमी की गहराई पर बीज बोएं। पौधों को सहारा देकर ऊपर बढ़ाना लाभप्रद होता है।

खाद और उर्वरक

सेम की फसल की अच्छी उपज लेने के लिए उसमें 200–300 क्विंटल सड़ी हुई गोबर की खाद खेत में बुवाई से 25–30 दिन पहले डालना चाहिए बुवाई से पूर्व नालियों में 50 किग्रा डीएपी तथा 50 किग्रा म्यूरेट आफ पोटाश प्रति हेक्टेयर के हिसाब से मिलाना चाहिए। 30 किग्रा यूरिया बुवाई के 20–25 दिन बाद व इतनी ही मात्रा 50–55 दिन बाद पुष्पन व फलन की अवस्था में डालना चाहिए।

सिंचाई

अगेती फसल में आवश्यकता के अनुसार सिंचाई करनी चाहिए। वर्षाकालीन फसल में आमतौर पर सिचाई की आवश्यकता नहीं होती है। यदि वर्षा काफी समय तक न हो तो आवश्यकतानुसार सिचाई करते रहें। फरवरी–मार्च में 10–15 दिन के अंतर पर सिंचाई करनी चाहिए।

अंतर–सस्य क्रियाएं

2–3 गुड़ाई खरपतवार के नियंत्रण के लिए आवश्यक है। बेल वाली सेम में वृद्धि अधिक होती है इसलिए इसके विकास के लिए झमड़े की आवश्यकता होती है। बेहतर विकास और फलों के लिए पौधों को पतली बांस के सहारे ऊपर की तरफ चढ़ाया जाना चाहिए।

तुड़ाई एवं उपज

जुलाई–अगस्त में बोई जाने वाली फसल में नवम्बर–दिसंबर में फूल निकल आते हैं। फूल निकलने के 2–3 सप्ताह बाद फलियों की पहली

तुड़ाई की जा सकती है। फलियों की तुड़ाई में देरी नहीं करनी चाहिए अन्यथा फलियाँ कठोर हो जाती है। झाड़ीनुमा किस्में फसल बोने के दो महीने बाद तुड़ाई के लिए तैयार होती है तथा केवल 2–3 तुड़ाई प्राप्त होती है। बेल वाली सेम में पहली बार बुवाई के 3 महीने बाद तुड़ाई शुरू होती है तथा 7 दिनों के अंतराल पर 9–10 बार तुड़ाई करनी चाहिए। पूरी तरह से विकसित अपरिपक्व फली को तोड़ना चाहिए। प्रति हेक्टेयर 100 से 150 क्विंटल तक हरी फलियाँ मिल जाती हैं।

कीट नियन्त्रण

माहुः यह एक छोटा सा कीट होता है जो पत्तियों और पौधों के अन्य भाग का रस चूस लेता है फूल और फलियों को काफी हानि पहुंचाता है। इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस एल या थायोमेथोक्जाम 70 डब्लू एस 0.4–0.5 मिली दवा प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करना चाहिए।

फली भेदक कीटः यह कीट कोमल फलियों में छेद करके नुकसान पहुंचाता है। डाइमेथोएट 30 ई सी 2.0 मिली प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करना चाहिए।

रोग नियन्त्रण

चूर्णिल आसिताः यह एक फफूंदी जनित रोग है। इसकी फफूंदी जड़ के अलावा पौधे के प्रत्येक भाग को प्रभावित करती है। पत्तियां पीली पड़कर मर जाती हैं। कलियाँ या तो बनती नहीं या यदि बनती भी हैं तो बहुत छोटी रहती हैं जिससे उपज पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। केराथेन 2.0 ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करना चाहिए।

जीवाणु अंगमारीः बीज पत्रों एवं नई पत्तियों पर रोग के लक्षण सर्वप्रथम दिखाई पड़ते हैं। इस रोग के कारण बीज पत्र लाल रंग के होकर सिकुड़ जाते हैं। नई पत्तियों पर सूखे धब्बे बनते हैं। पौधों की कलिकाएं नष्ट हो जाती हैं और बढ़वार रूक जाती है तथा अन्त में पूरा पौधा सूख जाता है।

रोगी पौधों के अवशेषों को नष्ट कर देना चाहिए। फसल चक्र अपनाना चाहिए। खड़ी फसल में कॉपर ऑक्सीक्लोराइड 2.0 ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करना चाहिए।

मोजेकः यह एक विषाणु जनित रोग है जो माहु कीट द्वारा फैलता है। पौधों की पत्तियां हल्की पीली हो जाती हैं। रोग की उग्र अवस्था में पत्तियों का आकार छोटा हो जाता है और उन पर फफोले सदृष उभार आ जाते हैं। रोगी फलियों के दाने सिकुड़ जाते हैं तथा कम बनते हैं।

रोगी पौधों को उखाड़ कर नष्ट कर देना चाहिए। रोगरहित पौधों से प्राप्त बीज को ही बीज उत्पादन के काम में लाना चाहिए। माहु के नियंत्रण हेतु इमिडक्लोप्रिड 17.8 एस एल 0.4–0.5 मिली प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करना चाहिए।

12. गाजर

गाजर (*डोकस केरोटा*) की खेती पूरे भारतवर्ष में की जाती है। गाजर को कच्चा एवं पकाकर दोनों ही तरह से उपयोग में लिया जाता है। गाजर में कैरोटीन एवं विटामिन 'ए' पाया जाता है जो मनुष्य की आँखों के लिए बहुत ही लाभदायक है। नारंगी रंग की गाजर में कैरोटीन की मात्रा अधिक पाई जाती है।

जलवायु एवं मृदा

गाजर एक ठन्डे मौसम में उगाई जाने वाली फसल है। गाजर की बढ़वार अधिक तापक्रम होने पर कम हो जाती है तथा रंग में परिवर्तन हो जाता है। जड़ों के अच्छे रंग के विकास हेतु लिए 15–21^{0}C तापमान उपयुक्त होता है। इसके लिए बलुई दोमट तथा दोमट मृदा सर्वोत्तम होती है। भूमि में पानी का निकास होना अतिआवश्यक है।

खेत की तैयारी

पहली जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से करनी चाहिए। इसके बाद दो–तीन जुताई कल्टीवेटर या देशी हल से करके मिट्टी को भुरभुरा बना लेना चाहिए। सड़ी गोबर की खाद खेत तैयार करते समय भूमि में अच्छी तरह से मिला देना चाहिए।

उन्नत किस्में

उष्ण प्रकार (एशियटिक) किस्में: पूसा केसर, पूसा मेघाली, पूसा रुधिरा, पूसा असिता, पूसा वृष्टि, पूसा वसुदा (F_1 हाईब्रिड)

शीतोषण प्रकार (यूरोपियन) किस्में: चेंटनी, पूसा यमदाग्नि, पूसा हिमज्योति (F_1 हाईब्रिड)

बीज दर एवं बुवाई

गाजर की बुवाई हेतु 5–6 किग्रा बीज प्रति हेक्टेयर पर्याप्त होता है। बुवाई से पहले बीज को थिरम (2.5 ग्राम प्रति किग्रा बीज) से उपचारित करना चाहिए। गाजर की बुवाई उत्तरी भारत में अगस्त से अक्टूबर तक की जाती है। यूरोपियन किस्मों की बुवाई नवम्बर में की जाती है। इसकी बुवाई 25–30 सेंटीमीटर की दूरी पर लाइनों में मेंड़ो के ऊपर करनी चाहिए। मेंड़ो की ऊंचाई 20–25 सेंटीमीटर रखनी चाहिए तथा पौधे से पौधे की दूरी 8 से 10 सेंटीमीटर रखते हैं। बीज को 1.5–2 सेंटीमीटर गहराई पर बोना चाहिए।

खाद एवं उर्वरक

200 से 250 क्विंटल प्रति हेक्टेयर सड़ी गली गोबर की खाद खेत तैयार करते समय देना चाहिए। प्रति हेक्टेयर 60 किग्रा नत्रजन, 40 किग्रा फास्फोरस तथा 120 किग्रा पोटाश भी देना चाहिए। नत्रजन की आधी मात्रा तथा फास्फोरस व पोटाश की पूरी मात्रा बुवाई से पहले देना चाहिए। नत्रजन की शेष आधी मात्रा को खड़ी फसल में दो बार में देना चाहिए। शुरूआत में पत्तियों की बढ़वार के समय तथा उसके बाद जड़ों की बढ़वार के समय देना चाहिए।

सिंचाई

बुवाई के तुरंत बाद नाली में पहली सिंचाई करनी चाहिए जिससे मेंड़ों में नमी बनी रहे। बाद में 8 से 10 दिन के अंतराल पर सिंचाई करते रहना चाहिए। गर्मियों में 4 से 5 दिन के अंतराल पर सिंचाई करनी चाहिए।

खरपतवार नियन्त्रण

पूरे फसल काल में 2 से 3 निराई–गुड़ाई करनी चाहिए। प्रथम निराई–गुड़ाई के समय पौधों की छँटाई (थिनिंग) करके पौधे से पौधे के बीच की दूरी 4 से 5 सेंटीमीटर कर देना चाहिए। जब जड़ों की बढ़वार शुरू हो जाये तो मेड़ों पर हल्की मिट्टी चढ़ा देनी चाहिए। खरपतवार नियंत्रण हेतु बुवाई के तुरंत बाद खेत में पेन्डीमेथालीन की 3.3 लीटर मात्रा 600–800 लीटर पानी में घोलकर प्रति हेक्टेयर के हिसाब से छिड़काव करना चाहिए। छिड़काव के समय खेत में नमी अवश्य होनी चाहिए।

रोग एवं कीट प्रबंधन

गाजर में जड़ गलन एवं पत्ती धब्बा नामक रोग लगते हैं। इनकी रोकथाम के लिए पिछली फसलों के अवशेष को एकत्र करके नष्ट कर देना चाहिए। बीज को केप्टान या थिरम (2 ग्राम/ किग्रा बीज) से उपचारित करके बुवाई करनी चाहिए। इन रोगों का प्रकोप होने पर इंडोफिल एम–45 (2 ग्राम/ लीटर पानी) का छिड़काव करना चाहिए।

गाजर की फसल को अर्ध गोलाकार सूंडी नुकसान पहुंचाती है। इसकी रोकथाम हेतु डाइमेथोएट 30 ई सी (2 मिली/ लीटर पानी) का छिड़काव करना चाहिए।

खुदाई एवं उपज

गाजर की जड़ें जब खाने योग्य हो जायें तभी इसकी खुरपी द्वारा खुदाई करनी चाहिए, जिससे जड़ें कटे नहीं और गुणवत्ता भी अच्छी बनी रहे। गाजर में जड़ों की उपज किस्म के प्रकार पर निर्भर करती है। एशियटिक प्रकार की किस्मों से 250–300 क्विंटल प्रति हेक्टेयर तथा यूरोपियन प्रकार की किस्मों से 100–150 क्विंटल प्रति हेक्टेयर पैदावार प्राप्त होती है।

13. मूली

मूली (*रेफेनस सेटाइवस*) अत्यन्त महत्वपूर्ण सब्जी है। इसे कच्चा सलाद के रूप में या अचार बनाने के प्रयोग में भी लेते हैं। इसकी खेती पूरे भारतवर्ष में की जाती है। इसका उत्पादन मुख्य रूप से पश्चिम बंगाल, बिहार, पंजाब, असम, हरियाणा, गुजरात, हिमाचल प्रदेश एवं उत्तर प्रदेश में होता है।

जलवायु एवं मृदा

यह ठन्डे मौसम की फसल है। इसकी बढ़वार हेतु 10–15° सेल्सियस तापक्रम अच्छा होता है। अधिक तापक्रम पर जड़ें सख्त हो जाती हैं। मूली का अच्छा उत्पादन लेने हेतु जीवांश युक्त दोमट या बलुई दोमट मृदा अच्छी रहती है। भूमि का पी.एच. मान 6.5 के आस–पास होना चाहिए।

खेत की तैयारी

पहली जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से तथा दो–तीन जुताई कल्टीवेटर या देशी हल से करके मिट्टी को भुरभुरा बना लेना चाहिए। जुताई करते समय 200–250 क्विंटल प्रति हेक्टेयर सड़ी गली गोबर की खाद मिला देना चाहिए।

उन्नत किस्में

उष्ण प्रकार (एशियटिक) किस्में: पूसा देशी, पूसा चेतकी, पूसा रेशमी, पूसा जामुनी, पूसा गुलाबी, पूसा मृदुला, जापानीज सफेद, पंजाब सफेद, पंजाब पसन्द

शीतोषण प्रकार (यूरोपियन) किस्में: व्हाइट इसली, रेपिड रेड व्हाइट टिप्ड, स्कारलेट ग्लोब, पूसा हिमानी। शीतोष्ण प्रकार की किस्में कम तापमान को सहन कर लेती हैं।

बीज दर एवं बुवाई

मूली का बीज 10 से 12 किग्रा प्रति हेक्टेयर पर्याप्त होता है। मूली के बीज को 2.5 ग्राम थिरम प्रति किग्रा बीज की दर से शोधित करना चाहिए। मूली की बुवाई इसकी किस्म के आधार पर अलग–अलग समय पर की जाती है। जैसे पूसा हिमानी की बुवाई मध्य सितम्बर से जनवरी, पूसा चेतकी को मार्च से मध्य अगस्त तथा पूसा देसी को अगस्त से अक्टूबर तक बोया जाता है। बुवाई मेड़ों पर करना अच्छा रहता है। लाइन से लाइन या मेड़ों से मेंड़ो की दूरी 30–40 सेंटीमीटर तथा मेड़ की ऊँचाई 20–25 सेंटीमीटर रखी जाती है। पौधे से पौधे की दूरी 8 से 10 सेंटीमीटर रखी जाती है। बुवाई 3 से 4 सेंटीमीटर की गहराई पर करनी चाहिए।

खाद एवं उर्वरक

250 से 300 क्विंटल प्रति हेक्टेयर सड़ी गली गोबर की खाद खेत की तैयारी के समय देनी चाहिए। इसके साथ ही 50 किग्रा नत्रजन, 100 किग्रा फास्फोरस तथा 50 किग्रा पोटाश तत्व के रूप में प्रति हेक्टेयर की दर से डालना चाहिए। नत्रजन की आधी मात्रा तथा फास्फोरस व पोटाश की पूरी मात्रा बुवाई से पहले तथा नत्रजन की आधी मात्रा दो बार में खड़ी फसल में देना चाहिए। नत्रजन की ¼ मात्रा पौधों की बढ़वार के समय तथा ¼ नत्रजन की मात्रा जड़ों की बढ़वार के समय देना चाहिए।

सिंचाई

पहली सिंचाई पौधों की तीन चार पत्ती की अवस्था पर करनी चाहिए। मूली में सिंचाई भूमि के

अनुसार कम ज्यादा करनी पड़ती है। सर्दियों में 10–15 दिन के अंतराल पर तथा गर्मियों में प्रति सप्ताह सिंचाई करनी चाहिए।

खरपतवार नियंत्रण

पूरी फसल में 2 से 3 निराई–गुड़ाई करनी चाहिए। जब जड़ों की बढ़वार शुरू हो जाये तो एक बार मेड़ों पर मिट्टी चढ़ा देनी चाहिए। खरपतवार नियंत्रण हेतु बुवाई के तुरंत बाद 2 से 3 दिन के अंदर 3.3 लीटर पेन्डीमेथालीन को 600 से 800 लीटर पानी के साथ घोलकर प्रति हेक्टेयर के हिसाब से छिड़काव करना चाहिए।

रोग एवं कीट प्रबंधन

मूली में सफ़ेद रोली (व्हाइट रस्ट), पत्ती धब्बा तथा अंगमारी रोग लगते हैं। बीज को किसी फफूंदनाशक जैसे केप्टान या थिरम (2 ग्राम/ किग्रा बीज) से उपचारित करके बुवाई करनी चाहिए। रोगों का खड़ी फसल पर प्रकोप होने पर इंडोफिल एम–45 (2 ग्राम/ लीटर पानी) का छिड़काव करना चाहिए।

माहु, आरा मक्खी तथा बीटल मूली के प्रमुख कीट हैं। इनकी रोकथाम हेतु डाइमेथोएट 30 ई सी (2 मिली/ लीटर पानी) या मेलाथियान 50 ई सी (1.5–2 मिली/ लीटर पानी) का छिड़काव करना चाहिए।

खुदाई एवं उपज

मूली की जड़ें बुवाई के 45 से 50 दिन बाद खाने योग्य हो जाती हैं। इनकी जड़ों को सलाद एवं अचार बनाने में भी प्रयोग करते हैं। जड़ों की पैदावार 200 से 300 क्विंटल प्रति हेक्टेयर प्राप्त होती है।

14. शकरकंद

शकरकंद (*आइपोमिया बाटाटस*) की खेती मुख्यतः बिहार, उड़ीसा, उत्तर प्रदेश, मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र व कर्नाटक में की जाती है। यह स्टार्च व अल्कोहल का मुख्य स्त्रोत है। इसमें 10% स्टार्च तथा 3–6% अल्कोहल पाया जाता है।

जलवायु एवं मृदा

उष्ण तथा उपोष्ण जलवायु की एक प्रमुख कंद फसल है। इसकी खेती के लिए लंबे मध्यम गर्म मौसम की आवश्यकता होती है। कन्दों के बनने के लिए 21–27^0 सेल्सियस तापमान उपयुक्त रहता है। यह उचित जल निकास युक्त बलुई दोमट मृदा जिसमें पर्याप्त कार्बनिक पदार्थ हो, में अच्छी होती है। मृदा का पी.एच. मान 5.8–6.7 के बीच होना चाहिए। खेत की 2–3 जुताई करके मृदा को भुरभुरी बनाकर 60 सेमी की दूरी पर डोलियाँ (मेड) बना लेनी चाहिए।

उन्नत किस्में

पूसा लाल, पूसा सुंधरी, पूसा सफेद

बीज दर एवं बुवाई

शकरकंद की बुवाई उत्तरी भारत में जून–जुलाई में करते है। रोपाई करने के लिए बेल की 15–20 सेमी लंबी कटिंग जिसमें 4–6 गाँठे हो, को काम में लेते हैं। एक हेक्टेयर के लिए लगभग 50000–60000 कटिंग्स की आवश्यकता पड़ती है। बेलों के इन टुकड़ों को 60 x 30 सेमी की दूरी पर मेडों पर लगाते हैं। यदि बेल उपलब्ध नही है तो पहले पौधशाला तैयार करते हैं। इसके लिए 125–150 ग्राम वजन वाले कन्दो की बुवाई पौधशाला में करके बेल तैयार कर लेना चाहिए। लगभग 100 किग्रा कंदो से एक हेक्टेयर क्षेत्र में बुवाई के लिए प्रयुक्त बेलें प्राप्त हो जाती हैं।

खाद एवं उर्वरक

100–150 क्विंटल सड़ी गली गोबर की खाद प्रति हेक्टेयर की दर से बुवाई के 2–3 सप्ताह पहले खेत में मिला देनी चाहिए। 45 किग्रा नत्रजन, 60 किग्रा फास्फोरस तथा 90 किग्रा पोटाश प्रति हेक्टेयर की दर से रोपाई के समय देना चाहिए। नत्रजन की 45 किग्रा मात्रा बुवाई के 45 दिन बाद खडी फसल में देनी चाहिए।

सिंचाई

वर्षा ऋतु में सिंचाई की आवश्यकता नहीं होती है, लेकिन जब लंबे समय तक वर्षा नहीं हो तो सिंचाई करनी चाहिए। रबी में बुवाई के तुरंत बाद सिंचाई करनी चाहिए, उसके बाद 8–10 दिन के अंतराल पर सिंचाई करनी चाहिए।

खरपतवार प्रबंधन

फसल को खरपतवारमुक्त रखने के लिए खेत से दो बार (रोपाई के 20 दिन व 40 दिन बाद) खरपतवार निकाल देना चाहिए हैं। दूसरी बार खरपतवार निकालते समय जड़ों पर मिट्टी चढ़ा देनी चाहिए जिससे जड़ खुली न रहे। खरपतवारनाशी जैसे फ्लुक्लोरेलिन (1 किग्रा प्रति हेक्टेयर) को रोपाई से पहले छिड़कने से खरपतवारों का नियंत्रण किया जा सकता है।

बेलों को बदलना

शकरकंद की बेल की गाँठे जहाँ भी भूमि के संपर्क में आती है वहीं से जड़ें निकल आती है, इस

कारण खाद्य पदार्थ मुख्य कंदो को कम मिलकर अन्य कंदो को मिल जाता है। अतः यह आवश्यक है कि मुख्य कंद के आगे बढ़ने वाली बेलों को फसल की प्रारम्भिक अवस्था में भूमि के संपर्क से हटा देना चाहिए, जिससे पोषक तत्व मुख्य कंदो को अधिक मिल सके।

रोग एवं कीट प्रबंधन

शकरकंद में तना गलन तथा काला सड़न नामक बीमारियाँ लगती है। तना गलन बीमारी से कन्द प्रभावित होकर संपूर्ण पौधा सूखकर मर जाता है। काला सड़न से प्रभावित पत्तियां पीली हो जाती है तथा यह बीमारी खेत व भंडारण दोनों में लगती है। रोपाई के लिए रोगमुक्त बेलों का उपयोग करना चाहिए तथा कटिंग को 0.2% अरेटोन या एगेलोल के घोल में डुबोकर बुवाई करनी चाहिए।

शकरकंद में मुख्य कीट वीवील लगता है। इस कीट से फसल को सर्वाधिक क्षति होती है। यह कीट तने में छेद करके कोमल उत्तकों को खाता है। इसके लार्वा व वयस्क दोनों भंडारण में भी नुकसान करते है। नियंत्रण के लिए मेलाथियान 50 ई सी (1.5–2 मिली/ लीटर पानी) का 10 दिन के अंतराल पर छिड़काव करना चाहिए।

खुदाई एवं उपज

शकरकंद की फसल बुवाई के 120–180 दिन बाद खोदने के लिए तैयार हो जाती है। जब पत्तियां पीली होकर झड़ने लगती है तो फसल पक जाती है। जड़ों को खोदने में आसानी रहे, इसके लिए 4–6 दिन पहले सिंचाई करनी चाहिए। शकरकंद की उपज सिंचित क्षेत्रों में 300–400 क्विंटल व असिंचित क्षेत्रों में 120–180 क्विंटल प्रति हेक्टेयर तक प्राप्त होती है।

15. पालक

पत्ती वाली सब्जियों में पालक (*बीटा वल्गेरिस* किस्म *बेंगालेन्सिस*) का महत्तवपूर्ण स्थान है। पालक मुख्यतः मुलायम एवं कोमल पत्तियों के लिए उगाया जाता है। इसमें कैल्सियम, आयरन, विटामिन 'ए' एवं विटामिन 'सी' बहुतायत में पाये जाते हैं।

जलवायु

पालक की खेती पूरे साल विभिन्न प्रकार की जलवायु में की जा सकती है, परन्तु अत्यधिक तापक्रम इसके लिए हानिकारक होता है। अतः सर्दियों के महीने पालक की खेती के लिए उपयुक्त होते हैं।

मृदा एवं खेत की तैयारी

पालक को पर्याप्त उर्वरता वाली सभी प्रकार की मृदाओं में उगाया जा सकता है। भूमि में जलनिकास का भी उचित प्रबन्ध होना चाहिए। बलुई दोमट मृदा पालक के विकास के लिए अच्छी होती है। पालक की प्रजाति जैसे जोबनेर ग्रीन को 8 से 10 पी.एच. मान की क्षारीय भूमियों में भी उगाया जा सकता है। पालक की बुवाई के लिए खेत को 3–4 जुताई करके मिट्टी को भुरभुरी बना लेना चाहिए। उचित जलनिकास के लिए खेत को पाटे द्वारा समतल करना भी आवश्यक होता है।

उन्नत किस्में

भारत में पालक की अनेक किस्में उगाई जाती हैं, परन्तु अधिक पोषक तत्वों युक्त एवं मुलायम पत्तियों वाली, कटाई के बाद अच्छी और जल्दी पुर्नवृद्धि वाली एवं देर से कल्ले फूटने वाली प्रजाति ही अच्छी मानी जाती है। पालक की कुछ मुख्य किस्में जैसे जोबनेर ग्रीन, पूसा ज्योति, पूसा पालक, पूसा हरित, पूसा भारती, पंजाब ग्रीन इत्यादि हैं।

बीज दर एवं बुवाई

मैदानी क्षेत्रों में पालक की बुवाई वर्ष में तीन बार की जा सकती है। बसन्त ऋतु के शुरू में, वर्षा के शुरू में एवं मुख्य फसल सितम्बर व नवम्बर के मध्य में। तैयार खेत में पंक्तियों में बुवाई करना उचित रहता है, क्योंकि पंक्तियों में बुवाई करने से खरपतवार नियंत्रण, अन्तःकर्षण क्रियाएं एवं कटाई आसानी से की जा सकती है। एक हेक्टेयर क्षेत्र की बुवाई के लिए 25–30 किग्रा बीज की आवश्यकता होती है। बीज को 20 सेंटीमीटर की दूरी पर बनी पंक्तियों में 3–4 सेंटीमीटर की गहराई पर बोना चाहिए। ध्यान रहें बीज बोने से पहले खेत में पर्याप्त नमी रहनी चाहिए।

खाद एवं उर्वरक

पत्तियों वाली सब्जियों के लिए नत्रजन एक बहुत ही आवश्यक तत्व है। खेत की तैयारी अर्थात बुवाई से 12–15 दिन पहले 200–250 क्विंटल प्रति हेक्टेयर के हिसाब से सड़ी गली गोबर की खाद मिट्टी में मिला देनी चाहिए। प्रति हेक्टेयर 25 किग्रा नत्रजन, 25 किग्रा फॉस्फोरस एवं 50 किग्रा पोटाश बुवाई से पहले खेत तैयार करते समय मिट्टी में मिला देना चाहिए। प्रत्येक कटाई के बाद 15–20 किग्रा नत्रजन प्रति हेक्टेयर की दर से टॉप ड्रेसिंग करने से उपज अधिक प्राप्त होती है।

सिंचाई

सिंचाई मौसम एवं मिट्टी की स्थिति पर निर्भर करती है। यदि खेत में बुवाई के समय पर्याप्त नमी न हो तो बुवाई के तुरन्त बाद एक हल्की सिंचाई

करनी चाहिए। बसन्त एवं गर्मी के मौसम में 6 से 7 दिन के अन्तराल तथा सर्दियों में 10 से 15 दिन के अन्तराल पर सिंचाई करनी चाहिए।

खरपतवार नियंत्रण

पालक में खुरपी द्वारा खरपतवार निकालने की एक मुख्य प्रक्रिया है। सामान्यतः दो तीन अन्तः कर्षण क्रियाएँ खरपतवार नियंत्रण के लिए पर्याप्त रहती है।

रोग एवं कीट प्रबंधन

पालक में आर्द्र गलन एवं सरकोस्पोरा लीफ स्पॉट मुख्य बीमारियाँ लगती हैं। आर्द्र गलन से बचने के लिए बीज को बुवाई से पहले 2.5 ग्राम प्रति किग्रा बीज की दर से केप्टान या थिरम से उपचारित करना चाहिए। सरकोस्पोरा लीफ स्पॉट से पत्तियों पर भूरे रंग के गोल धब्बे बन जाते हैं तथा इसके नियंत्रण के लिए क्लोरोथेलोनिल (2 ग्राम/ लीटर पानी) का छिड़काव करना चाहिए।

पत्ती छेदक कीट तथा एफिड (माहु) पालक को नुकसान पहुँचाते हैं। इन कीड़ों की रोकथाम के लिए मेलाथियान 50 ई सी (1.5–2.0 मिली/ लीटर पानी) का छिड़काव करना चाहिए।

कटाई एवं उपज

पालक की फ़सल की पहली कटाई बुवाई के 3–4 सप्ताह बाद की जाती है। इसके बाद 15 से 20 दिन के अन्तराल पर कटाई करनी चाहिए। पलाक की सामान्यतः 4–8 कटाई ली जा सकती हैं जिससे 100–150 क्विंटल प्रति हेक्टेयर हरी पत्तियों की उपज प्राप्त की जा सकती है।

16. चौलाई

चौलाई अमरन्थेसी कुल का पौधा है तथा इसकी खेती सब्जी और दानों के लिए की जाती है। एक बहुउद्देशीय एवं बहुमूल्य अल्प प्रयुक्त सब्जी है जिसके पत्ते से लेकर तना, फूल और दाना उपयोग में लाये जाते है। इसके 100 ग्राम दानों का सेवन करने से 410 किलो कैलौरी ऊर्जा प्राप्त होती है जो कि अन्य अनाजों से काफी अधिक है। इसके पत्तों की सब्जी काफी लोकप्रिय है तथा सभी ऋतुओं में उपलब्ध रहती है।

उन्नत किस्में

छोटी चौलाई (*अमरेन्थस ब्लाइटम*): पूसा छोटी चौलाई

बड़ी चौलाई (*अमरेन्थस ट्राइकोलर*): पूसा बड़ी चौलाई, पूसा लाल चौलाई, पूसा कीर्ति

जलवायु

गर्म–आर्द्र मौसम चौलाई की खेती के लिए उपयुक्त रहता है। रात्रि में निम्न तापमान इसके अंकुरण व बढ़वार को प्रभावित करता है। C_4 पौधा होने के कारण यह पूर्ण सूर्य के प्रकाश में अच्छी प्रतिक्रिया देता है।

मृदा एवं खेत की तैयारी

चौलाई की खेती प्रायः सभी प्रकार की मृदाओं में की जा सकती है, परन्तु अच्छी उपज के लिए उचित जलनिकास वाली बलुई दोमट मृदा उत्तम रहती है। पौधों की बढ़वार व विकास के लिए मृदा का पी.एच. मान 6 से 8 के मध्य अच्छा रहता है। इसका बीज बहुत छोटा होने के कारण खेत की अच्छी प्रकार जुताई कर मिट्टी को भुरभुरा बना लेना चाहिए जिससे बीजों का मृदा से संपर्क अच्छी प्रकार से हो सके। खेत की 2–3 बार जुताई कर पाटा लगाकर खेत को समतल कर लेना चाहिए।

बीज दर एवं बुवाई

मैदानी क्षेत्रों में चौलाई की बुवाई जून से जुलाई और अक्टूबर से नवम्बर में करने पर अधिक उपज प्राप्त होती है। सिंचाई की सुविधा होने पर इसे फरवरी–मार्च में भी बोया जा सकता है। बीज की मात्रा बुवाई की विधि पर निर्भर रहती है। छिड़कवां विधि से बुवाई करने पर 2.0–2.5 किग्रा तथा कतार विधि से बुवाई करने पर 1.2–1.5 किग्रा प्रति हेक्टेयर बीज पर्याप्त रहता है। अधिक उपज के लिए बुवाई पंक्तियों में करना चाहिए। कतार से कतार 30 सेमी तथा पौधे से पौधे के मध्य 15 सेमी की दूरी रखना उत्तम रहता है। बीज को 1 सेमी की गहराई पर बोना चाहिए। आसानी से बुवाई करने के लिए बीज को रेत के साथ मिलाकर (1:4) बोया जाना अच्छा रहता है।

खाद एवं उर्वरक

200–250 क्विंटल प्रति हेक्टेयर सड़ी गली गोबर की खाद को बुवाई के 2–3 सप्ताह पहले खेत में एक समान बिखेर कर जुताई कर देना चाहिए। इसके अलावा बुवाई के समय 30 किग्रा फास्फ़ोरस और 20 किग्रा पोटाश प्रति हेक्टेयर की दर से कतार में देना चाहिए। 50 किग्रा नत्रजन प्रति हेक्टेयर को तीन भागों में बाँटकर खड़ी फसल में (बुवाई के 20 दिन बाद, प्रथम कटाई के बाद तथा दूसरी कटाई के बाद) छिड़कना चाहिए।

सिंचाई

बुवाई के तुरंत बाद सिंचाई करना चाहिए। रबी एवं जायद में बोई जाने वाली फसल में 3–4 सिंचाई की आवश्यकता होती है। वर्षा ऋतु के समय खेत में जलनिकास की समुचित व्यवस्था अवश्य करनी चाहिए।

खरपतवार नियंत्रण

बुवाई के 5–6 दिन बाद खेत में खरवतवार उग आते है, जिनके नियंत्रण हेतु आवश्यकतानुसार निड़ाई–गुड़ाई करना चाहिए। सम्पूर्ण फसल काल में 2–3 निराई–गुड़ाई करके खरपतवार नियंत्रण करना चाहिए।

रोग एवं कीट प्रबंधन

इसकी मुख्य बीमारियों में आर्द्र गलन एवं सरकोस्पोरा लीफ स्पॉट हैं। आर्द्र गलन से बचाव के लिए बीज को केप्टान या थिरम (2.5 ग्राम प्रति किग्रा बीज) से उपचारित करके बुवाई करना चाहिए। सरकोस्पोरा लीफ स्पॉट से पत्तियों पर भूरे रंग के गोल धब्बे बन जाते हैं तथा इसके नियंत्रण के लिए क्लोरोथेलोनिल (2 ग्राम/ लीटर पानी) का छिड़काव करना चाहिए।

पत्ती छेदक कीट तथा एफिड (माहु) चौलाई की फसल पर आक्रमण करते हैं। इनकी रोकथाम के लिए मेलाथियान 50 ई सी का 1.5–2 मिली/ लीटर पानी की दर से छिड़काव करना चाहिए। कभी–कभी पौधों की पत्तियों पर पर्णजालक कीट का प्रकोप भी होता है। इसके नियंत्रण के लिए डाइमेथोएट 30 ई सी (2 मिली/ लीटर पानी) का छिड़काव करना लाभप्रद रहता है।

कटाई एवं उपज

चौलाई की प्रथम कटाई बुवाई के लगभग 25–30 दिन बाद कर सकते हैं। इसके बाद 8–10 दिन के अंतराल पर कटाई करते हैं। चौलाई के पौधे को कच्ची अवस्था में पूरा उखाड़कर या इसकी पत्तियों को जमीन के 2 सेमी ऊपर से काटना चाहिए। सामान्यतः फूल आने तक 6–8 कटाई कर सकते हैं। चौलाई की उपज 60–80 क्विंटल/ हेक्टेयर तक प्राप्त हो जाती है।

17. मेथी

मेथी एक लोकप्रिय बीजीय मसाला फसल एवं हरी पत्ती वाली सब्जी है। यह मुख्यतः राजस्थान, गुजरात, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश व पंजाब में बोई जाती है। इसकी हरी पत्तियाँ खनिज लवण, प्रोटीन, विटामिन 'ए' तथा 'बी' से भरपूर होती हैं।

उन्नत किस्में

साधारण मेथी (*ट्राइगोनेला फोइनम–ग्रेसियम*): पूसा अर्ली बंचिंग, आर.एम.टी.–1, अजमेर मेथी–1, अजमेर मेथी–2

कसूरी मेथी (*ट्राइगोनेला कोर्निकुलेटा*): पूसा कसूरी

जलवायु

मेथी एक शरद ऋतु की फसल है और इसकी बढवार एवं विकास के लिए मध्यम ठंडी जलवायु की आवश्यकता होती है। कसूरी मेथी को तुलनात्मक रूप से ठंडी जलवायु की आवश्यकता होती है। फली बनते समय अधिक आर्द्रता व बादल युक्त मौसम चूर्णिल आसिता तथा एफिड के आक्रमण व उग्रता को बढ़ाता है, जिससे उपज में कमी आती है।

मृदा एवं खेत की तैयारी

इसकी खेती लगभग सभी प्रकार की मृदाओं में की जा सकती है लेकिन उचित जलनिकास युक्त बलुई दोमट मृदा जिसका पी.एच. मान 6–7 हो, उत्तम रहती है। एक गहरी जुताई करने के बाद 2–3 हल्की जुताई करके खेत को समतल कर लेना चाहिए। मृदा में नमी के संक्षरण के लिए जुताई के तुरंत बाद पाटा लगाना चाहिए।

बीज दर एवं बुवाई

साधारण मेथी का 25–30 किग्रा व कसूरी मेथी का 20–25 किग्रा बीज प्रति हेक्टेयर बुवाई के लिए पर्याप्त होता है। समतल इलाक़ों में इसकी बुवाई सितंबर से मध्य मार्च तक करते हैं। बुवाई में कतार से कतार की दूरी 30 सेमी व पौधे से पौधे की दूरी 5–7.5 सेमी रखना चाहिए। मेथी दलहन फसल होती है इसलिए राइजोबियम मेलीलोटी कल्चर से मेथी के बीज को उपचारित करके बुवाई करनी चाहिए।

खाद एवं उर्वरक

150–200 क्विंटल सड़ी गली गोबर की खाद को खेत की तैयारी के समय मिट्टी में मिला देना चाहिए। दलहन फसल होने के कारण वायुमण्डलीय नत्रजन को उपलब्ध करने में सक्षम होती है अतः नत्रजन की कम आवश्यकता होती है। बुवाई के समय 30–40 किग्रा नत्रजन, 40 किग्रा फास्फोरस व 40 किग्रा पोटाश प्रति हेक्टेयर की दर से खेत में डालना चाहिए। नत्रजन को 2–3 बराबर भागों बाँटकर में पत्तियों की प्रत्येक कटाई के बाद खड़ी फसल में छिड़ककर देना चाहिए।

सिंचाई

मेथी की जल्दी बढ़वार के लिए नियमित सिंचाई की आवश्यकता होती है। प्रथम सिंचाई बुवाई के तुरंत बाद देनी चाहिए। यदि बुवाई नम मिट्टी में की गई है तो इसके 30 दिन बाद पहली सिंचाई करना चाहिए। जब मेथी की पत्तियाँ काटने लायक हो जाए तो 7–10 दिन के अंतराल पर सिंचाई करना चाहिए।

खरपतवार नियन्त्रण

बुवाई के 25 व 50 दिन पर निराई–गुड़ाई करके फसल को खरपतवारों से मुक्त रखना चाहिए। खरपतवार नियंत्रण के लिए फ्लुक्लोरेलिन (0.75 किग्रा प्रति हेक्टेयर) का बुवाई से पहले छिड़काव तथा बुवाई के 25 दिन बाद निराई–गुड़ाई कर सकते है।

रोग एवं कीट प्रबंधन

फसल की प्रारम्भिक अवस्था पर चूर्णिल आसिता नामक रोग लगता है। इसके नियंत्रण के लिए सल्फर चूर्ण को 20–25 किग्रा प्रति हेक्टेयर के हिसाब से भुरकना चाहिए। मृदुरोमिल आसिता के लिए इंडोफिल एम–45 (2 ग्राम/लीटर पानी) का छिड़काव करना चाहिए। आवश्यकता होने पर 15 दिन के अंतराल पर इसको दोहराना चाहिए। पत्ती धब्बा रोग के नियंत्रण के लिए कॉपर ऑक्सीक्लोराईड (2 ग्राम/लीटर पानी) का 15 दिन के अंतराल पर 2–3 छिड़काव करना चाहिए। जड़ गलन रोग से शुरुआत में पौधा पीला हो जाता है व पत्तियाँ सूख जाती हैं तथा बाद में संपूर्ण पौधा सूख जाता है। इसके नियंत्रण के लिए गर्मियों में खेत की गहरी जुताई करके छोड़ देना चाहिए तथा बीज को थिरम या केप्टान (2–3 ग्राम/किग्रा बीज) से उपचारित करके बोना चाहिए।

मेथी में मुख्य कीट माहु (एफिड) लगता है जो पत्तियों का रस चूसता है। इसके प्रकोप से पौधा पीला होकर कमजोर हो जाता है। इसकी रोकथाम के लिए इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस एल (0.4–0.5 मिली/लीटर पानी) का छिड़काव करना चाहिए। यदि आवश्यक हो तो इसको 15 दिन के अंतराल पर दोहराया जा सकता है।

तुड़ाई एवं उपज

मेथी की फसल बुवाई के 3–4 सप्ताह बाद जब पौधे 15–20 सेमी बड़े हो जायें तो प्रथम कटाई के लिए तैयार हो जाती है। इसके बाद कटाई 15–20 दिन के अंतराल पर करनी चाहिए। कसूरी मेथी में 5–6 कटाई कर सकते हैं। हरी पत्तियों की उपज साधारण मेथी में 70–80 क्विंटल/हेक्टेयर तथा कसूरी मेथी से 90–100 क्विंटल/हेक्टेयर तक प्राप्त होती है।

18. खरबूजा

कद्दूवर्गीय फसलों में खरबूजा (*कुकुमिस मेलो*) एक महत्वपूर्ण फसल है तथा इसकी खेती मुख्य रूप से उत्तर प्रदेश, पंजाब, राजस्थान, हरियाणा, महाराष्ट्र, बिहार एवं मध्य प्रदेश के गर्म तथा शुष्क क्षेत्रों में की जाती है। राजस्थान में खरबूजा की खेती व्यापक रूप से की जाती है। इसकी खेती नदियों के किनारे मुख्य रूप से होती है। खरबूजा एक स्वादिष्ट फल है जो गर्मियों में तरावट देता है तथा इसके बीजों का उपयोग मिठाई को सजाने में किया जाता है। इसके सेवन से पेट विकार भी ठीक होते हैं। इसके खाने वाले भाग में विटामिन 'सी' एवं शर्करा की मात्रा अधिक होती है।

मृदा एवं जलवायु

खरबूजा राजस्थान की जलवायु में एक नकदी फसल है। गर्म एवं शुष्क जलवायु वाले प्रदेश इसकी खेती के लिए उत्तम है। उचित जल निकास और जीवाशंयुक्त बलुई या दोमट मिट्टी इसके लिए सर्वोत्तम रहती है। मृदा का पी.एच. मान 5–7 के मध्य होना चाहिए। यह गर्मी के मौसम की फसल है। बीज के जमाव एवं पौधों की बढ़वार के लिए 20–22° सेल्सियस तापक्रम अच्छा होता है। फल पकते समय मौसम शुष्क तथा पछुआ हवा बहने से फलों में मिठास बढ़ जाता है। हवा में अधिक नमी होने से फल देरी से पकते हैं और रोग लगने की संभावना भी बढ़ जाती है।

प्रमुख किस्में

पूसा मधुरस, पूसा मधुरिमा, हरा मधु, पंजाब सुनहरी, दुर्गापुरा मधु, आर.एम.–43, आर.एम.–50, एम.एच.वाई.–3, एम.एच.वाई.–5

खेत की तैयारी

खरबूजा की बुवाई हेतु खेत की तैयारी के लिए पहली जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से तथा 2–3 जुताईयां कल्टीवेटर से करनी चाहिए। प्रत्येक जुताई के बाद पाटा चलाकर मिट्टी को भुरभुरा कर लेना चाहिये। उचित जल निकास के लिए खेत को समतल कर लेना चाहिये तथा आखिरी जुताई के समय ही खेत में 200–250 क्विंटल प्रति हेक्टेयर सड़ी गली गोबर की खाद को अच्छी प्रकार मिला देना चाहिये।

बीज दर एवं बीज उपचार

औसतन एक हेक्टेयर क्षेत्रफल के लिए 1.0–1.5 किग्रा बीज की आवश्यकता पड़ती है। 100 बीज का औसतन वजन लगभग 2.5 ग्राम होता है। बीज को बोने से पूर्व केप्टान या थिरम (2 ग्राम प्रति किग्रा बीज) से उपचारित कर लेना चाहिये।

बुआई का समय एवं विधि

मैदानी क्षेत्रों में खरबूजा की बुआई 15–25 फरवरी के बीच में तथा पहाड़ी क्षेत्रों में अप्रैल से मई तक की जाती है। नदियों के कच्छार में इसकी बुवाई दिसम्बर में अथवा जनवरी के प्रथम सप्ताह में करते है। दक्षिण एवं मध्य भारत में इसकी बुवाई अक्टूबर–नवम्बर में की जाती है। खरबूजा की बुवाई के लिए 2.0–2.5 मीटर की दूरी पर नालियां बनानी चाहिये। बीज की बुवाई नाली के किनारे पर करने के लिये 60–80 सेमी की दूरी पर थाले में 2–3 बीज लगाना चाहिये। बीज को 1.5–2.0 सेमी की गहराई पर बोना चाहिये। थाले में बोये गये बीज 4–5 दिनों में अंकुरित हो जाते हैं। नदियों के

किनारे इसकी बुवाई गड्डों में करते हैं। इसके लिये 60x60x60 सेमी का गड्डा बनाकर उसमें 1:1:1 के अनुपात में गोबर की खाद, मिट्टी तथा बालू मिलाते है। इसके बाद एक गड्डे में 2–3 बीज की बुवाई करते हैं। बूँद–बूँद सिंचाई की व्यवस्था होने पर खेत में लेटरल को सीधी कतार में बिछाकर बीजों को ड्रिपर्स के पास बोते हैं। बुवाई के 15–20 दिन बाद प्रत्येक जगह 1–2 स्वस्थ पौधे छोड़कर बाकी को निकाल देना चाहिए।

पोषक तत्व प्रबंधन

खरबूजा की अगेती फसल की मांग ज्यादा रहती है। इसके लिए आरम्भ में पौधों की वृद्धि तेज होनी चाहिये जिससे उस पर जल्दी पुष्प एवं फल आ जाये। खेत में 200–250 क्विंटल प्रति हेक्टेयर अच्छी प्रकार सड़ी हुई गोबर की खाद डालना चाहिये। इसके अतिरिक्त उर्वरक के रूप में 80 किग्रा नत्रजन, 75 किग्रा फास्फोरस तथा 50 किग्रा पोटाश प्रति हेक्टेयर की दर से खेत में डालना चाहिए। नत्रजन की आधी मात्रा तथा फास्फोरस व पोटाश की पूरी मात्रा खेत की तैयारी के समय देना चाहिए। बची हुई नत्रजन की मात्रा दो बराबर भागों में टॉप ड्रेसिंग के रूप में जड़ के पास बुवाई के 20 एवं 40 दिन बाद देनी चाहिए जिससे कुल उपज बढ़ जाती है।

खरपतवार नियंत्रण एवं निराई–गुड़ाई

सिंचाई करने के बाद नालियों तथा थालों में खरपतवार उग आते हैं। इन्हें समय–समय पर खेत से निकालते रहना चाहिए। सिंचाई करने के बाद मिट्टी सख्त हो जाती है। अतः सिंचाई के बाद हल्की गुड़ाई करनी चाहिए, जिससे खेत की पपड़ी टूट जाती है और पौधों की जड़ों को हवा मिल जाती है तथा पौधों का विकास तेजी से होता है। गुड़ाई के समय पौधों की जड़ों पर हल्की मिट्टी चढ़ा देनी चाहिए।

सिंचाई

सफल अंकुरण के लिए खेत में पर्याप्त नमी का होना अत्यन्त आवश्यक है। थालों में लगाये गये पौधों को नालियों से सिंचाई करते है। शुरुआत में हर सप्ताह पानी देने की आवश्यकता पड़ती है। पौधों की बढवार एवं फलों के बढ़ने के समय खेत में नमी की कमी नहीं होनी चाहिए। फलों के पूरी तरह बढ़ जाने के बाद सिंचाई को कम कर देना चाहिए जिससे फलों में मिठास बढ़ जाती है। खरबूजा की फसल में कुल 5–6 बार सिंचाई की आवश्यकता होती है। सिंचाई जल की उपलब्धता कम होने की दशा में बूँद–बूँद तकनीकी अपनाकर खरबूजा के उत्पादन को बढ़ाया जा सकता है। शुष्क क्षेत्रीय जलवायु में खरबूजा की खेती के लिए सिंचाई की बूँद–बूँद तकनीक सर्वोत्तम रहती है। इस प्रणाली में 4 लीटर प्रति घण्टे के ड्रिपर से 3–4 दिन के अंतराल पर 2–3 घण्टे सिंचाई करनी चाहिए।

तुड़ाई, उपज एवं तुड़ाई उपरान्त प्रबन्धन

खरबूजा की अच्छी फसल से 150–200 क्विंटल/ हेक्टेयर तक उपज प्राप्त की जा सकती है। जब फसल पूरी तरह पक जाये तभी तुड़ाई करनी चाहिए। फलों को सुबह के समय ही तोड़ना चाहिए। निम्नलिखित लक्षणों के आधार पर खरबूजा के पकने की अवस्था की सही पहचान की जाती है।

1. फल दूसरी छोर से पकना प्रारम्भ करता है जिससे फल का रंग बदल जाता है तथा फल का छिलका मुलायम सा प्रतीत होता है।

2. पके हुये फल से कस्तूरी जैसी सुगंध आती है।
3. कभी–कभी फल तने से पूर्णतया अलग हो जाता है जिसे 'फुल स्लिप स्टेज' कहा जाता है तथा स्थानीय बाजार के लिए 'फुल स्लिप स्टेज' पर फलों को तोड़ना उत्तम माना जाता है।

खरबूजा की फसल से अधिक आय प्राप्त करने के लिए फलों को ग्रेडिंग करके विक्रय करना चाहिए। विपणन योग्य फलों को किस्म, आकार व वजन के अनुरूप 2–3 वर्गों में बाँट लेना चाहिए। बदरुप, कटे–फटे एवं छोटे आकार के फलों से बीज निकाल लेना चाहिए क्योंकि खरबूजा के बीजों का व्यावसायिक महत्व भी होता है। फलों को 12–15^0 सेल्सियस तापमान पर 10–12 दिन तक भंडारित किया जा सकता है।

19. तर ककड़ी

तर ककड़ी या ककड़ी (*कुकुमिस मेलो* किस्म *यूटिलिसीमस*) जायद की एक प्रमुख फसल है। इसके फल हल्के हरे रंग के होते हैं जिनमें चिकनी त्वचा और सफेद गुद्दा होता है। इसको मुख्य रूप से नमक और काली मिर्च के साथ सलाद के रूप में कच्चा खाया जाता है। फल में शीतलन प्रभाव होता है इसलिए यह मुख्य रूप से गर्मी के मौसम में उगाई जाती है। यह एक नकदी फसल है।

मृदा एवं जलवायु

ककड़ी की खेती के लिए 6.0—7.5 पी.एच. मान वाली मिट्टी सर्वोत्तम रहती है। जीवाशंयुक्त बलुई या दोमट मिट्टी सर्वोत्तम पाई गई है। यह एक गर्म शुष्क जलवायु की फसल है। बीज के जमाव एवं पौधों की बढ़वार के लिए 20—22° सेल्सियस तापमान अच्छा होता है।

प्रमुख किस्में

थार शीतल, अर्का शीतल, पंजाब लोंगमेलन—1

बीज दर एवं बुवाई

ककड़ी की बुवाई के लिए 1.0—1.5 किग्रा बीज प्रति हेक्टेयर की आवश्यकता पड़ती है। बीज को बोने से पूर्व केप्टान या थिरम (2 ग्राम/ किग्रा बीज) से उपचारित कर लेना चाहिये। फरवरी माह में बुवाई करना चाहिए। अगेती फसल लेने के लिए पालिथीन की लो टनल में दिसम्बर महीने में बुवाई की जा सकती है। तर ककड़ी की बुवाई 2.0 मीटर की दूरी पर नालियाँ बनाकर करना चाहिए। पौधे से पौधे का अंतर 50—60 सेमी रखकर एक स्थान पर 2—3 बीज बोना चाहिए।

खाद और उर्वरक

गोबर की खाद 150—200 क्विंटल प्रति हेक्टेयर, नत्रजन 50—60 किग्रा, फॉस्फोरस 60—80 किग्रा और पोटाश 50—60 किग्रा प्रति हेक्टेयर देना चाहिए। गोबर की खाद, फॉस्फोरस व पोटाश की पूरी मात्रा व नत्रजन की आधी मात्रा को खेत की अंतिम जुताई के समय मिलाना चाहिए। नत्रजन की शेष मात्रा को दो बराबर भागों में बाँटकर वानस्पतिक वृद्धि तथा फूल बनते समय देना चाहिए।

सिंचाई

बुवाई के तुरंत बाद सिंचाई की आवश्यकता पड़ती है। गर्मियों में 2—3 दिन के अंतराल पर बूँद—बूँद पद्धति से सिंचाई करनी चाहिए है। बरसात के मौसम में सिंचाई आवश्यकता के अनुसार की जाती है।

अंतर—सस्य क्रियाएं

घास को नियंत्रित करने के लिए लताओं के प्रसार से पहले दो निराई—गुड़ाई की आवश्यकता होती है। गुड़ाई के समय पौधों की जड़ों पर हल्की मिट्टी चढ़ा देनी चाहिये।

तुड़ाई एवं उपज

नरम व चिकने फलों को सुबह अथवा शाम के समय तोड़ना चाहिए। तुड़ाई के समय फलों की लम्बाई 20—30 सेमी होनी चाहिए। अगेती फसल से अच्छे दाम प्राप्त करने के लिए फलों को छोटी अवस्था में तोड़ना चाहिए। उपज, फलों को तोड़ने की अवस्था पर निर्भर करती है तथा औसत पैदावार 150—180 क्विंटल प्रति हेक्टेयर तक प्राप्त होती है।

20. काचरी

मरुस्थलीय क्षेत्र में काचरी (*कुकुमिस केलोसस*) का विशेष महत्व है। काचरी को सदियों से परम्परागत खेती में घटक फसल के रुप में अपनाया जाता रहा है। ताजा फलों का सब्जी, सलाद व चटनी व सूखें फलों को संरक्षित कर वर्ष भर सब्जी व चटनी के लिए उपयोग किया जाता है। काचरी के 100 ग्राम ताजा फलों से 88.25% जल, 7.45% कार्बोहाईड्रेट, 0.28% प्रोटीन, 1.28% वसा, 1.21% रेशा, 29.81 मिलीग्राम विटामिन 'सी' एवं 47.24 किलो केलोरी उष्मा मिलती है।

जलवायु

काचरी शुष्क एवं गर्म जलवायु की फसल है। इसके पौधे शुष्क जलवायु वाले क्षेत्रों में अच्छी तरह पनपते हैं। इसकी ग्रीष्म एवं वर्षाकालीन फसल के रुप में खेती की जाती है। अधिक गर्मी का प्रतिकूल प्रभाव सहन करने मे सक्षम होती है। कम वर्षा (250–300 मिमी) वाले क्षेत्रों के लिए उपयुक्त रहती है। फसल बुवाई के समय बीजों में शीघ्रता व अधिकतम अंकुरण के लिए 20–22° सेल्सियस व पौधों की वानस्पतिक वृद्धि व फल जमाव के लिए 32–38° सेल्सियस तापमान सर्वाधिक उपयुक्त रहता है। परंतु गर्म मरुस्थलीय क्षेत्रों में जब अधिकतम तापमान 40–42° सेल्सियस तक रहता है वहाँ भी इसकी खेती सफलतापूर्वक की जाती है।

मृदा

काचरी की फसल लगभग सभी प्रकार की भूमि में पैदा की जा सकती है लेकिन सबसे उत्तम बलुई दोमट भूमि रहती है। सफल फसल उत्पादन के लिये जल–निकास का भी उचित प्रबन्ध होना अतिआवश्यक है। जमीन का पी.एच. मान 5.5 से 6.5 तक अनुकूल रहता है।

किस्में

ए.एच.के.–119: पूर्ण विकसित फल अण्डाकार होते हैं। छिलका कठोर व खंडित धारियों युक्त होता है। फल का वजन 50–60 ग्राम होता है। 95–100 क्विंटल/ प्रति हेक्टेयर उत्पादन मिलता है। इसमें अधिक तापमान व सुखा सहन करने की क्षमता होती है।

ए.एच.के.–200: पूर्ण विकसित फसल मध्यम बड़े व दीर्घायतकार होते हैं। फलों का वजन 100–120 ग्राम होता है। पहली तुड़ाई बुवाई के 65–70 दिनों बाद शुरु हो जाती है। उपज 115–120 क्विंटल/ हेक्टेयर प्राप्त होती है।

बुवाई का समय

काचरी की वर्षा आधारित खेती के लिए जून के अंतिम सप्ताह से जुलाई के अंत तक पहली बारिश के तुरंत बाद बुवाई करनी चाहिए। सिंचित फसल के लिए बुवाई जुलाई व फरवरी माह में उपयुक्त रहती है।

बीज व बुवाई

नाली या कुड विधि से बुवाई करने के लिए 0.8–1.0 किग्रा बीज प्रति हेक्टेयर पर्याप्त रहता है। नाली या कुड में बुवाई करने के लिए 1.5–2.0 मीटर की अंतराल पर 50–60 सेमी चौड़ाई की नालियां बनाई जाती हैं। नालियों के अंदर ढलान पर 50–60 सेमी की दूरी पर 3–4 बीजों की बुवाई करना चाहिए। बुवाई के 3–4 दिनों में अंकुरण हो जाता है।

खाद और उर्वरक

अच्छी उपज के हेतु 20 ट्राली सड़ी गली गोबर की खाद, 80 किग्रा नत्रजन, 40 किग्रा फास्फोरस एवं 40 किग्रा पोटाश प्रति हेक्टेयर की दर से तत्व के रुप में देनी चाहिए। नत्रजन की आधी मात्रा, फास्फोरस तथा पोटाश की पूरी मात्रा खेत की तैयारी के समय देना चाहिए। बची हुई नत्रजन की आधी मात्रा दो समान भागो में बांटकर 4–5 पत्ती की अवस्था तथा शेष आधी मात्रा पौधों में फूल बनने से पहले टॉप ड्रेसिंग के रुप में देनी चाहिए।

सिंचाई

वर्षाकाल में सिंचाई करने की आवश्यकता नहीं होती परंतु वर्षा न होने पर 10–15 दिनों के अंतराल पर सिंचाई की आवश्यकता पड़ती है। अधिक वर्षा की स्थिति में पानी के निकास के लिए नालियों का गहरा व चौड़ा होना आवश्यक है। गर्मियों में अधिक तापमान होने के कारण 4–5 दिनों के अंतराल पर सिंचाई करना चाहिए।

अंतर–सस्य क्रियाएं

सिंचाई के बाद खेत में काफी मात्रा में खरपतवार उग आते हैं। अतः उनको खुरपी की सहायता से बुवाई के 25–30 दिन बाद निकाल देना चाहिए। काचरी में पौधों की अच्छी वृद्धि एवं विकास के लिए 2–3 बार निराई–गुड़ाई करके जड़ों के पास मिट्टी चढ़ा देना चाहिए।

तुड़ाई एवं उपज

पौधों से फलों की पहली तुड़ाई बुवाई के 70–80 दिनों के बाद प्रारंम्भ हो जाती है। प्रारम्भिक अवस्था में फल कड़वे होते हैं तथा जमाव के 30–35 दिनों पश्चात तुड़ाई योग्य हो जाते हैं। प्रति हेक्टेयर 100–120 क्विंटल उपज प्राप्त होती है।

21. फूट ककड़ी

फूट ककड़ी (*कुकुमिस मेलो* किस्म *मोमोर्डिका*) मरुस्थलीय क्षेत्र की एक महत्वपूर्ण एवं बहुलोकप्रिय सब्जी है। फूट ककड़ी के पूर्ण विकसित फलों को मुख्य रूप से सब्जी, रायता व सलाद के रूप में उपयोग में लिया जाता है। पके फलों को सुखाकर भण्डारण किया जाता है जिसे स्थानीय भाषा में खेलरा कहते हैं। पके फलों से प्राप्त सूखे बीजों का उपयोग ठंडाई व मिठाई में व्यापारिक महत्व है।

जलवायु

यह सामान्यतया शुष्क एवं गर्म जलवायु वाले क्षेत्रों के लिए उपयुक्त है। इसके बीजों का अंकुरण 25–35° सेल्सियस तापमान पर सर्वाधिक एवं बुवाई के 3–5 दिनों में शीघ्रता से हो जाता है। यह गर्म जलवायु की फसल है। इसके पौधे शुष्क जलवायु वाले क्षेत्रों में अच्छी तरह पनपते है। इसकी ग्रीष्म एवं वर्षाकालीन फसल के रुप में खेती की जाती है। फल पकने के समय बरसात आने पर फलों की गुणवत्ता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है इसलिए कम वर्षा (250–300 मिमी) उपयुक्त रहती है। फसल बुवाई के समय बीजों में शीघ्रता व अधिकतम अंकुरण के लिए 20–22° सेल्सियस व पौधों की वानस्पतिक वृद्धि व फल जमाव के लिए 30–32° सेल्सियस तापमान सर्वाधिक उपयुक्त रहता है। परंतु गर्म मरुस्थलीय क्षेत्रों में जब अधिकतम तापमान 45–48° सेल्सियस तक रहता है वहां भी इसकी सफलतापूर्वक खेती होती है।

मृदा

इसकी फसल लगभग सभी प्रकार की भूमि में की जा सकती है। लेकिन फिर भी सबसे उत्तम बलुई दोमट भूमि रहती है। सफल फसल उत्पादन के लिये जल–निकास का भी उचित प्रबन्ध होना अति आवश्यक है। मिट्टी का पी.एच. मान 7.0 होना चाहिए।

किस्में

ए.एच.एस.–10: इसमें बुवाई के 26 दिन बाद नर और 38 दिन बाद मादा फूल खिलने प्रारम्भ हो जाते हैं। पके फलों की तुड़ाई 68 दिन बाद प्रारम्भ हो जाती है जो 120 दिन तक चलती रहती है। एक हेक्टेयर से 200–220 क्विंटल फल मिल जाते हैं। फल दीर्घ आयताकार व माध्यम आकर के होते हैं।

ए.एच.एस.–82: इसमें बुवाई के 28 दिन बाद नर और 35 दिन बाद मादा फूल खिलने प्रारम्भ हो जाते हैं। पके फलों की तुड़ाई 70 दिन बाद प्रारम्भ हो जाती है जो 110–115 दिन तक चलती रहती है। एक हेक्टेयर से 225–250 क्विंटल फल मिल जाते हैं।

बुवाई का समय

फूट ककड़ी की बुवाई ग्रीष्म ऋतु हेतु फरवरी–मार्च तथा वर्षा आधारित खेती के लिए जून के अंतिम सप्ताह से जुलाई के अंत तक या पहली बारिस के तुरंत बाद करें ।

बीज की मात्रा व बुवाई

नाली या कुड विधि से बुवाई करने के लिये 1.5–2 किग्रा बीज प्रति हेक्टेयर पर्याप्त रहता है। फूट ककड़ी को सामान्यत: तीन विधियों से लगाया जाता है।

(अ) नाली विधि: इस विधि में 2.0–2.5 मीटर की अंतराल पर 60–70 सेमी चौड़ाई की नलियाँ

बनाई जाती हैं। नालियों की अंदर की उतरी ढ़लान पर 50–60 सेमी की दूरी पर 3–4 बीजों की बुवाई करें। यह विधि फूट ककड़ी की व्यावसायिक खेती के लिए सर्वाधिक उपयुक्त व लाभप्रद है।

(ब) कुड विधिः रेतीले टीबों वाले व असमतल क्षेत्रों के लिए सबसे उपयुक्त विधि है। फसल उत्पादन के लिए 2.0–2.5 मीटर की दूरी के अंतराल पर देशी हल से कुड बनाते हुए उर्वरको के साथ 50–60 सेमी के अंतराल पर 2–3 बीजों को बोया जता है।

(स) मिश्रित फसल उत्पादनः मिश्रित खेती में 5–6 मीटर की दूरी पर हल से कुड बनाकर बुवाई की जाती है।

खाद और उर्वरक

अच्छी उपज के हेतु 20–25 ट्राली सड़ी हुई गोबर की खाद, 80 किग्रा नत्रजन, 40 किग्रा फास्फोरस एवं 40 किग्रा पोटाश प्रति हेक्टेयर की दर से तत्व के रुप में देनी चाहिए। नत्रजन की आधी मात्रा खेत की तैयारी के समय देना चाहिए। बची हुई नत्रजन की आधी, फास्फोरस तथा पोटाश की पूरी मात्रा खेत की तैयारी के समय देना चाहिए। बची हुई नत्रजन की आधी मात्रा दो समान भागो में बांटकर 4–5 पत्ती की अवस्था तथा शेष आधी मात्रा पौधों में फूल बनने के पहले टॉप ड्रेसिंग के रुप में देनी चाहिए।

सिंचाई

खेत में सिंचाई करने की आवश्यकता नहीं होती परंतु वर्षा न होने पर 10–15 दिनों के अंतराल पर सिंचाई की आवश्यकता पड़ती है। अधिक वर्षा की स्थिति में पानी के निकास के लिए नालियों का गहरा व चौड़ा होना आवश्यक है। गर्मियों में अधिक तापमान होने के कारण 4–5 दिनों के अंतराल पर सिंचाई करना चाहिए।

अंतर–सस्य क्रियाएं

सिंचाई के बाद खेत में काफी मात्रा में खरपतवार उग आते है। अतः उनको खुरपी की सहायता से 25–30 दिनों बाद निराई–गुड़ाई करके निकाल देना चाहिए। पौधौं की अच्छी वृद्धि एवं विकास के लिए 2–3 बार निराई–गुड़ाई करके जड़ों के पास मिट्टी चढ़ा देना चहिए।

फल तुड़ाई व उपज

फलों की पहली तुड़ाई बुवाई के 60–80 दिनों के बाद प्रारंम्भ हो जाती है। विकसित फल प्रारम्भ अवस्था में कड़वे होते हैं लेकिन जमाव के 30–35 दिनों पश्चात तुड़ाई योग्य हो जाते हैं। ग्रीष्मकालीन फसल से 175–200 क्विंटल तथा वर्षाकालीन से 200–250 क्विंटल प्रति हेक्टेयर उत्पादन लिया जा सकता है।

22. तरबूज

तरबूज (*सिटरुलस लेनाटस*) कुकुरबिटकेसी कुल का सदस्य है। यह गर्मियों में सबसे अधिक लोकप्रिय फल है तथा मई–जून की तेज धूप व लू के लिये लाभदायक होता है।

जलवायु एवं मृदा

तरबूज मुख्य रूप से गर्म जलवायु की फसल है जिनमे ठंड तथा पाला सहन करने की क्षमता नहीं होती है। बीज के अंकुरण व पौधों की बढ़वार के लिए 25–30° सेल्सियस तापमान उपयुक्त रहता है। तापमान के 40° सेल्सियस से अधिक होने पर फसल की बढ़वार, उपज तथा गुणवत्ता पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। तरबूज के लिए उचित जल निकास वाली जीवांश पदार्थ से युक्त बलुई दोमट या दोमट मृदा उत्तम रहती है। मृदा का पी. एच. मान 6 से 7 के बीच होना चाहिए।

उन्नत किस्में

थार माणक, शुगर बेबी, दुर्गापुरा लाल, अर्का मानिक, अर्का मधुरा, दुर्गापुरा केसर

बीज उपचार, बीज दर तथा बुवाई

तरबूज की बुवाई का उपयुक्त समय फरवरी–मार्च है। बुवाई से पहले बीजों को 20–24 घण्टे तक पानी में भिगोना चाहिए जिससे अंकुरण जल्दी होता है। बीजों को बुवाई से पहले केप्टान या थिरम या कार्बेण्डाजिम (2 ग्राम प्रति किग्रा) से उपचरित करना चाहिए। इन सब्जियों की बुवाई के लिए "नाली या थाला" (हिल तथा चैनल) विधि सर्वोत्तम रहती है। खेत में पूर्व से पश्चिम दिशा की ओर 45–60 सेमी चौड़ी तथा 30–40 सेमी गहरी नालियाँ बना लेना चाहिए। एक नाली से दूसरी नाली के बीच की दूरी 2–2.5 मीटर रखना चाहिए। प्रत्येक नाली के किसी एक किनारे पर 50–60 सेमी की दूरी पर थाला बनाकर एक जगह 2–3 बीजों को 1–2 सेमी की गहराई पर बोना चाहिए। एक हेक्टेयर में तरबूज की बुवाई के लिए 2–2.5 किग्रा बीज की आवश्यकता होती है। बूँद–बूँद सिंचाई की व्यवस्था होने पर खेत में लेटरल को अनुसंशित दूरी पर बिछाकर बीजों को ड्रिपर्स के पास बोना चाहिए। बुवाई के लगभग 15 दिन बाद जब पौधों के 2–4 पत्तियां आने पर अतिरिक्त पौधों को निकालकर प्रति थाला 1–2 स्वस्थ पौधा रखना चाहिए।

खाद व उर्वरक

खाद एवं उर्वरक की मात्रा मृदा की उर्वरता पर निर्भर करती है। खेत की अन्तिम जुताई के समय 200 से 250 क्विंटल सड़ी–गली गोबर की खाद प्रति हेक्टेयर की दर से मिलाना चाहिए। नत्रजन, फास्फोरस एवं पोटाश की मात्रा क्रमशः 80:60:60 किग्रा प्रति हेक्टेयर की दर से मिलानी चाहिए। नत्रजन की एक तिहाई तथा फास्फोरस व पोटाश की पूरी मात्रा अन्तिम जुताई के समय देनी चाहिए। नत्रजन की शेष मात्रा को दो समान भागों में बांटकर बुवाई के 25 से 30 तथा 45 से 50 दिनों के बाद खड़ी फसल में छिटक कर देनी चाहिए। इसके अतिरिक्त पौधों में लता बनने व पुष्पन के समय जल में घुलनशील एन.पी.के. 19:19:19 की 8–10 किग्रा मात्रा प्रति हेक्टेयर की दर से बूंद–बूंद सिंचाई माध्यम से देने पर उपज में वृद्धि होती है। गुणवत्तायुक्त उपज प्राप्त करने के लिए पुष्पन व फलत के समय सूक्ष्मतत्वों का पर्णीय छिड़काव (5–6 ग्राम प्रति लीटर पानी के हिसाब से) करना लाभदायक होता है।

सिंचाई

सफल अंकुरण के लिए खेत में पर्याप्त नमी का होना अत्यन्त आवश्यक है इसके लिए फसल में समय पर पानी देना चाहिए। अंकुरण के बाद सप्ताह में एक बार सिंचाई अवश्य करनी चाहिए। गर्मी की फसल को औसतन 2–3 दिन पर सिंचाई की आवश्यकता होती है। वर्षा ऋतु के दौरान सिंचाई की आवश्यकता पूर्व वृद्धि अवस्था में होती है तथा इस दौरान जल निकास का उचित प्रबन्ध भी करना चाहिए। फसल की क्रांतिक अवस्थाओं जैसे लता विकास, फूलन तथा फलों के विकास के समय सिंचाई अवश्य करनी चाहिए अन्यथा उपज में बहुत कमी हो जाती है। सिंचाई की बूँद–बूँद प्रणाली सबसे अधिक उपयुक्त होती है, क्योंकि इस विधि में पानी की बचत सर्वाधिक होती है। इस प्रणाली में 4 लीटर प्रति घण्टे के ड्रिपर से 2–3 दिन के अन्तराल पर 1–1.5 घण्टे सिंचाई करनी चाहिए।

निराई–गुड़ाई एवं खरपतवार प्रबन्धन

खेत को खरपतवारमुक्त रखने के लिए समय–समय पर निराई–गुड़ाई करके खरपतवारों को निकालते रहना चाहिए। तरबूज की फसल को खरपतवारमुक्त रखने के लिए 2–3 बार निराई–गुड़ाई करनी चाहिए।

फलों की तुड़ाई

तरबूज के फलों को बुवाई से 2 से 3 महीने के बाद तोड़ना आरम्भ कर देते हैं। फलों के पकने की पहचान निम्नलिखित तरीकों से की जाती है:

- फल के साथ वाला टेंडरिल (तंतु) सूख जाता है।
- फल को अंगुली से बजाने पर भारी मंद ध्वनि देता है, जबकि अपरिपक्व फल धातु की ध्वनि देते हैं।
- फल का जमीन पर टिका हुआ हिस्सा पीला हो जाता है।
- परिपक्व फल हाथ की हथेली के साथ दबाने पर कुरकुरी आवाज उत्पन्न करता है।

उपज

तरबूज की पैदावार किस्म के अनुसार अलग–अलग होती है। साधारणतः तरबूज की औसतन पैदावार 400–500 क्विंटल प्रति हेक्टेयर तक प्राप्त होती है।

23. लौकी

लौकी (*लगेनेरिया साइसिरेरिया*) कद्दुवर्गीय कुल की महत्त्वपूर्ण सब्जी है। इसको सब्जी के अलावा विभिन्न प्रकार के व्यंजन जैसे रायता, कोफता, हलवा, खीर इत्यादि बनाने के लिए प्रयोग करते हैं। यह कब्ज को कम करने पेट को साफ करने, खाँसी या बलगम दूर करने में अत्यंत लाभकारी है। इसके मुलायम फलों में प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट, खाध्य रेशा, खनिज लवण के अलावा प्रचुर मात्रा में अनेक विटामिन पाये जाते हैं।

जलवायु

लौकी की अच्छी पैदावार के लिए गर्म एवं आर्द्रता वाले भौगोलिक क्षेत्र सर्वोत्तम होते हैं। अतः इसकी फसल जायद तथा खरीफ दोनों ऋतुओं में सफलतापूर्वक उगायी जाती है। बीज अंकुरण के लिए 30–35° सेल्सियस तथा पौधों की बढ़वार के लिए 32–38° सेल्सियस तापमान उत्तम होता है।

मृदा

पी.एच. मान 6.0–7.0 वाली बलुई दोमट तथा जीवांशयुक्त चिकनी मिट्टी लौकी की खेती के लिए उपयुक्त होती है। जल निकास का भी अच्छा प्रबंधन होना चाहिए। खेत की तैयारी के लिए पहली जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से तथा बाद में 2–3 जुताई देशी हल या कल्टीवेटर से करनी चाहिए। प्रत्येक जुताई के बाद खेत में पाटा चलाकर मिट्टी को भुरभुरी एवं समतल कर लेना चाहिए जिससे खेत में सिंचाई करते समय पानी कम या ज्यादा न लगे।

किस्में

थार समृद्धि, पूसा मेघदूत, पूसा नवीन, पूसा समर प्रोलीफिक लॉन्ग, पूसा समर प्रोलीफिक राउंड, पंजाब कोमल, काशी गंगा, काशी बहार

बीज एवं बुवाई

सीधी बीज बुवाई के लिए 2.5–3.0 किग्रा बीज एक हेक्टेयर क्षेत्रफल के लिए पर्याप्त होता है। पालिथीन की थेलियों या नियंत्रित वातावरण युक्त गृहो में प्रो–ट्रे में पौधशाला तैयार करने के लिए 1 किग्रा बीज पर्याप्त है। लौकी की बुवाई ग्रीष्म ऋतु (जायद) में 15–25 फरवरी तक तथा वर्षा ऋतु (खरीफ) में 15 जून से 15 जुलाई तक कर सकते है। पर्वतीय क्षेत्रों में बुवाई मार्च–अपैल के महीने में की जाती है।

लौकी की बुवाई के लिए 2.0–2.5 मीटर की दूरी पर 45–50 सेमी चौड़ी व 20–25 सेमी गहरी नालियां बना लेते हैं। इन नालियों के दोनों किनारे पर 60–75 सेमी की दूरी पर बीज की बुवाई करते है। एक स्थान पर 2–3 बीज 4 सेमी की गहराई पर बोना चाहिए।

खाद और उर्वरक

अच्छी उपज के हेतु 200–250 क्विंटल/हेक्टेयर सड़ी गली गोबर की खाद, 80–100 किग्रा नत्रजन, 40 किग्रा फास्फोरस एवं 40 किग्रा पोटाश प्रति हेक्टेयर की दर से तत्व के रुप में देनी चाहिए। नत्रजन की आधी, फास्फोरस तथा पोटाश की पूरी मात्रा खेत की तैयारी के समय

देना चाहिए। बची हुई नत्रजन की आधी मात्रा दो समान भागो में बांटकर 4–5 पत्ती की अवस्था तथा शेष आधी मात्रा पौधों में फूल बनने के पहले टॉप ड्रेसिंग के रुप में देनी चाहिए।

सिंचाई

खरीफ ऋतु में खेत में सिंचाई करने की आवश्यकता नहीं होती परंतु वर्षा न होने पर 10–15 दिनों के अंतराल पर सिंचाई की आवश्यकता पड़ती है। अधिक वर्षा की स्थिति में पानी के निकास के लिए नालियों का गहरा व चौड़ा होना आवश्यक है। गर्मियों में अधिक तापमान होने के कारण 4–5 दिनों के अंतराल पर सिंचाई करना चाहिए।

अंतर–सस्य क्रियाएं

दोनों ऋतु में सिंचाई के बाद खेत में काफी मात्रा में खरपतवार उग आते है अतः उनको खुरपीकी सहायता से बुवाई के 25–30 दिनों बाद निराई–गुड़ाई करके निकाल देना चाहिए। लौकी में पौधों की अच्छी वृद्धि एवं विकास के लिए 2–3 बार निराई–गुड़ाई करके जड़ों के पास मिट्टी चढ़ा देना चाहिए। रासायनिक खरपतवारनाशी के रुप में ब्यूटाक्लोर की 2 किग्रा मात्रा प्रति हेक्टेयर की दर से बुवाई के तुरंत बाद छिड़काव करना चाहिए। वर्षा ऋतु में लौकी की गुणवत्तायुक्त व अधिक उपज प्राप्त करने के लिए लकड़ी या लोहे के द्वारा निर्मित मचान पर चढ़ा कर खेती करनी चाहिए। इससे फलों का आकार सीधा एवं अच्छा रहता है तथा बढ़वार भी तेजी से होती है। प्रारंभिक अवस्था में निकलने वाली कुछ शाखाओं को काटकर निकाल देना चाहिए जिससे ऊपर विकसित होने वाली शाखाओं में फल ज्यादा बनते हैं। सामान्यतः मचान की उँचाई 5.0–5.5 फीट तक रखते हैं। इस पद्धति के उपयोग से सस्य क्रियाओं से संबंधित लागत कम हो जाती है।

तुड़ाई एवं उपज

लौकी के फलों की तुड़ाई मुलायम अवस्था में करनी चाहिए। फलों का वजन किस्मों पर निर्भर करता है। फलों की तुड़ाई डण्ठल सहित किसी तेज चाकू से करना चाहिए। तुड़ाई चार से पाँच दिन के अंतराल पर करना चाहिए ताकि पौधों पर ज्यादा फल लगें। औसतन लौकी की उपज 350–500 क्विंटल/ हेक्टेयर प्राप्त होती है।

24. करेला

करेला (*मोमोर्डिका चारन्सिया*) एक लता वर्गीय फसल है जिसके फलों की सब्जी बनाई जाती है। इसका स्वाद कड़वा होता है। इसके फल का तरकारी के रूप में व मधुमेह रोगियों को खाने की सलाह दी जाती है।

जलवायु

करेला के लिए गर्म एवं आर्द्र जलवायु की आवश्यकता होती है। पाला इसके लिए हानिकारक होता है।

मृदा

करेला को विभिन्न प्रकार की भूमियों में उगाया जा सकता है किन्तु उचित जल धारण क्षमता वाली जीवांशयुक्त हल्की दोमट मिटटी सर्वोत्तम रहती है। उदासीन पी.एच. मान वाली भूमि इसकी खेती के लिए अच्छी रहती है। नदियों के किनारे वाली भूमि भी करेला की खेती के लिए उपयुक्त रहती है। पहली जुताई मिटटी पलटने वाले हल से करने के बाद 2–3 बार हैरो या कल्टीवेटर चलाकर मिट्टी को भुरभुरा करना चाहिए।

किस्में

पूसा दो मौसमी, पूसा विशेष, अर्का हरित, पूसा संकर–1, पूसा संकर–2, काशी उर्वसी, सोलन ग्रीन

बीज की मात्रा व बुवाई

3.0–3.5 किग्रा बीज प्रति हेक्टेयर पर्याप्त होता है। बुवाई का समय 15 फरवरी से फरवरी अंत (ग्रीष्म ऋतु) तथा 15 जुलाई से 30 जुलाई (वर्षा ऋतु) है। एक स्थान पर 2–3 बीज 2–3 सेमी की गहराई पर बोने चाहिए। बीज को बोने से पूर्व 24 घंटे तक पानी में भिगो लेना चाहिए जिससे अंकुरण जल्दी होता है। बुवाई दो प्रकार से की जाती है।

1. सीधे बीज द्वारा
2. पौध रोपण द्वारा

खाद और उर्वरक

अच्छी उपज हेतु 60–80 किग्रा नत्रजन 40–60 किग्रा फास्फोरस एवं 30–60 किग्रा पोटाश प्रति हेक्टेयर देनी चाहिए। नत्रजन की आधी मात्रा तथा फास्फोरस व पोटाश की पूरी मात्रा खेत की तैयारी के समय देना चाहिए। बची हुई नत्रजन की आधी मात्रा को दो समान भागो में बांटकर 4–5 पत्ती की अवस्था तथा पौधों में फूल बनने के पहले टॉप ड्रेसिंग के रुप में देनी चाहिए।

सिंचाई

पहली सिंचाई बुवाई के तुरंत बाद करनी चाहिए। गर्मी में पानी 4 से 5 दिन बाद और बरसात में जरूरत के हिसाब से सिंचाई करना चाहिए।

अंतर–सस्य क्रियाएं

पौधों के विकास के प्रारंभिक चरण के दौरान खरपतवारों को निकालने के लिए दो से तीन गुड़ाई करनी चाहिए। बरसात के मौसम की फसल को आमतौर पर बांस और लाठी से बने पंडाल पर प्रशिक्षित किया जाता है।

तुड़ाई एवं उपज

फलों की तुड़ाई छोटी व कोमल अवस्था में करनी चाहिए। आमतौर पर फल बोने के 50–55 दिन बाद तुड़ाई के लिए तैयार हो जाते हैं। फल तोड़ने का कार्य 3 दिन के अन्तराल पर करते रहना चाहिए। औसतन 150–180 क्विंटल उपज प्रति हेक्टेयर प्राप्त होती है।

25. टिंडा

टिंडा (*सिटरुलस लेनाटस* किस्म *फिस्टुलोसस*) एक कद्दूवर्गीय सब्जी है तथा इसका सब्जियों में एक विशेष स्थान है। टिंडा से लगभग सभी प्रकार के पोषक तत्व जैसे प्रोटीन, विटामिन तथा खनिज लवण प्राप्त होते हैं। पंजाब, उत्तर प्रदेश तथा राजस्थान में मुख्य रूप से इसकी खेती की जाती है।

जलवायु एवं मृदा

टिंडा मुख्य रूप से गर्म जलवायु की फसल है। इसमें ठंड तथा पाला सहन करने की क्षमता नहीं होती है। बीज के अंकुरण व पौधों की बढ़वार के लिए 25–30° सेल्सियस तापमान उपयुक्त रहता है। तापमान के 40° सेल्सियस से अधिक होने पर फसल की बढ़वार, उपज तथा गुणवत्ता पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। अधिक वर्षा और बादल वाला मौसम रोग व कीटों के प्रकोप को बढ़ावा देता है। इसकी खेती के लिए उचित जल निकास वाली जीवांश पदार्थ से युक्त बलुई दोमट या दोमट मृदा उत्तम रहती है। मृदा का पी.एच. मान 6 से 7 के बीच होना चाहिए।

उन्नत किस्में

पूसा रौनक, सलेक्शन–48, अर्का टिंडा

बीज उपचार, बीज दर तथा बुवाई

ग्रीष्मकालीन फसल की बुवाई फरवरी–मार्च तथा वर्षाकालीन फसल की बुवाई जून–जुलाई में करनी चाहिए। बुवाई से पहले बीजों को 20–24 घण्टे तक पानी में भिगोना चाहिए जिससे अंकुरण जल्दी होता है। बीजों को बुवाई से पहले केप्टान या थिरम या कार्बण्डाजिम (2 ग्राम प्रति किग्रा) से उपचारित करना चाहिए। टिंडा की बुवाई के लिए "नाली या थाला" (हिल तथा चैनल) विधि सर्वोत्तम रहती है। खेत में पूर्व से पश्चिम दिशा की ओर 45–60 सेमी चौड़ी तथा 30–40 सेमी गहरी नालियाँ बना लेना चाहिए। एक नाली से दूसरी नाली के बीच की दूरी 2.0 मीटर रखना चाहिए। प्रत्येक नाली के किसी एक किनारे पर 50–60 सेमी की दूरी पर थाला बनाकर एक जगह 2–3 बीजों को 1–2 सेमी की गहराई पर बोना चाहिए। एक हेक्टेयर में टिंडा की बुवाई के लिए 2.5–3.0 किग्रा बीज की आवश्यकता होती है। बूंद–बूंद सिंचाई की व्यवस्था होने पर खेत में लेटरल को अनुसंशित दूरी पर बिछाकर बीजों को ड्रिपर्स के पास बोना चाहिए। बुवाई के लगभग 15 दिन बाद जब पौधों के 2–4 पत्तियां आने पर अतिरिक्त पौधों को निकालकर प्रति थाला 1–2 स्वस्थ पौधा रखना चाहिए।

खाद व उर्वरक

खाद एवं उर्वरक की मात्रा मृदा की उर्वरता पर निर्भर करती है। खेत की अन्तिम जुताई के समय 200 से 250 क्विंटल सड़ी–गली गोबर की खाद प्रति हेक्टेयर की दर से मिलाना चाहिए। नत्रजन, फास्फोरस एवं पोटाश की मात्रा क्रमशः 80:60:60 किग्रा प्रति हेक्टेयर की दर से मिलानी चाहिए। नत्रजन की एक तिहाई तथा फास्फोरस व पोटाश की पूरी मात्रा अन्तिम जुताई के समय देनी चाहिए। नत्रजन की शेष मात्रा को दो समान भागों में बांटकर बुवाई के 25 से 30 तथा 45 से 50 दिनों के बाद खड़ी फसल में देना चाहिए। इसके अतिरिक्त पौधों में लता बनने व पुष्पन के समय जल में घुलनशील एन.पी.के. 19:19:19 की 8–10 किग्रा मात्रा प्रति हेक्टेयर की दर से बूंद–बूंद

सिंचाई के साथ देने से उपज में वृद्धि होती है। गुणवत्तायुक्त उपज प्राप्त करने के लिए पुष्पन व फलत के समय सूक्ष्मतत्वों का पर्णीय छिड़काव (5–6 ग्राम प्रति लीटर पानी के हिसाब से) करना लाभदायक होता है।

सिंचाई

सफल अंकुरण के लिए खेत में पर्याप्त नमी का होना अत्यन्त आवश्यक है इसके लिए फसल में समय पर पानी देना चाहिए। अंकुरण के बाद सप्ताह में एक बार सिंचाई अवश्य करनी चाहिए। गर्मी की फसल को औसतन 2–3 दिन पर सिंचाई की आवश्यकता होती है। वर्षा ऋतु के दौरान सिंचाई की आवश्यकता पौधों की लता विकास अवस्था में होती है तथा इस दौरान जल निकास का भी उचित प्रबन्ध करना चाहिए। फसल की क्रांतिक अवस्थाओं जैसे लता विकास, फूल तथा फलों के विकास के समय सिंचाई अवश्य करनी चाहिए अन्यथा उपज में बहुत कमी हो जाती है। कम पानी की स्थिति में बूँद–बूँद सिंचाई प्रणाली सबसे अधिक उपयुक्त होती है, क्योंकि इस विधि में पानी की बचत सर्वाधिक होती है। इस प्रणाली में 4 लीटर प्रति घण्टे के ड्रिपर से 2–3 दिन के अन्तराल पर 1–1.5 घण्टे सिंचाई करनी चाहिए।

निराई–गुड़ाई एवं खरपतवार नियन्त्रण

बीज की बुवाई के 48 घंटे के अंदर पेन्डीमेथालीन की 3.3 लीटर मात्रा को 1000 लीटर पानी में घोलकर प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करना चाहिए। इसके बाद खेत को खरपतवारमुक्त रखने के लिए समय–समय पर निराई–गुड़ाई करके खरपतवारों को निकालते रहना चाहिए। गर्मी की फसल में 2–3 तथा वर्षाकालीन फसल में 3–4 निराई–गुड़ाई करनी चाहिए।

तुड़ाई एवं उपज

आमतौर पर बुवाई के 45–50 दिनों बाद फलों की तुड़ाई शुरू हो जाती है। फलों को कच्ची अवस्था में तोड़ना चाहिए क्योंकि पके फल सब्जी के लिए उपयुक्त नहीं रहते हैं। प्रति हेक्टेयर 100–125 क्विंटल तक उपज प्राप्त होती है।

26. धारीदार तोरई

कद्दुवर्गीय सब्जियों के अंतर्गत धारीदार तोरई (*लुफ्फा अकुटेंगुला*) का प्रमुख स्थान है। यह एक कम लागत वाली सब्जी फसल है जिसके कच्चे फलों का उपयोग सब्जी के लिए किया जाता है। तोरई की खेती गर्मी एवं वर्षा दोनों ऋतुओं में सफलतापूर्वक की जा सकती है। अच्छी उपज के लिये लम्बे समय तक गर्म मौसम तथा औसतन तापमान 25–27° सेल्सियस तक आवश्यक होता है। अंकुरण व पौधों की बढ़वार के लिए 25–30° सेल्सियस तापमान उपयुक्त होता है। पुष्पन व फलन के दौरान अत्यधिक गर्मी अथवा वर्षा होने पर उपज पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

भूमि एवं खेत की तैयारी

तोरई की खेती विभिन्न प्रकार की मृदाओं में सफलतापूर्वक की जा सकती है। यदि पर्याप्त कार्बनिक पदार्थ एवं उचित जल निकास की व्यवस्था हो तो, बलुई दोमट मृदा इसकी खेती के लिये उपयुक्त मानी जाती है। मृदा की जल धारण क्षमता विशेषकर ग्रीष्म ऋतु में अच्छी होनी चाहिए। उचित जल निकास वाली, जीवांशयुक्त, बलुई दोमट मृदा जिसका पी.एच. मान 6.5 से 7.0 के मध्य हो, तोरई के लिये आदर्श मृदा होती है। खेत की पहली जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से तथा इसके बाद 2–3 जुताई कल्टीवेटर से करनी चाहिए।

उन्नत किस्में

थार करणी, पूसा नसदार, पूसा नूतन, पंजाब सदाबहार, अर्का सुजात, अर्का सुमित, अर्का प्रसन।

खाद व उर्वरक

खाद एवं उर्वरक की मात्रा मृदा की उर्वरता पर निर्भर करती है। खेत की अन्तिम जुताई के समय 200–250 क्विंटल सड़ी गली गोबर की खाद प्रति हेक्टेयर की दर से मिलाना चाहिए। नत्रजन, फास्फोरस एवं पोटाश की मात्रा क्रमशः 80:60:60 किग्रा प्रति हेक्टेयर की दर से मिलानी चाहिए। नत्रजन की एक तिहाई तथा फास्फोरस व पोटाश की सम्पूर्ण मात्रा अन्तिम जुताई के समय देनी चाहिए। नत्रजन की शेष मात्रा को दो समान भागों में बांटकर बुवाई के 25 से 30 तथा 45 से 50 दिनों के बाद खड़ी फसल में छिटक देनी चाहिए। इसके अतिरिक्त पौधों में लता बनने व पुष्पन के समय जल में घुलनशील एन.पी.के. 19:19:19 की 8–10 किग्रा मात्रा प्रति हेक्टेयर की दर से बूंद–बूंद सिंचाई माध्यम से देने पर उपज में वृद्धि होती है। गुणवत्तायुक्त उपज प्राप्त करने के लिए पुष्पन व फलन के समय सूक्ष्मतत्वों का पर्णीय छिड़काव करना लाभदायक होता है।

बीज दर एवं बीज उपचार

बीज की दर विभिन्न कारकों जैसे किस्म, बीज अंकुरण का प्रतिशत, बुवाई की विधि एवं मौसम पर निर्भर करती है। सामान्यतः 2.0–2.5 किग्रा/ हेक्टेयर बीज पर्याप्त होता है। बुवाई करने से पूर्व बीजों को केप्टान या थिरम नामक फफूंदनाशी दवा (2 ग्राम/ किग्रा बीज) से उपचारित करना चाहिए।

बुवाई का समय एवं बुवाई

बुवाई का समय ऋतु और स्थान पर निर्भर करता है। तोरई की फसल को ग्रीष्म व वर्षा दोनों ऋतुओं में उगाया जा सकता है। ग्रीष्मकालीन फसल की बुवाई 15 फरवरी से 15 मार्च तथा वर्षाकालीन फसल की 15 जून से 15 जुलाई तक करनी चाहिए। फरवरी मे तापमान कम रहने से अंकुरण देरी से होता है अतः शीघ्र अंकुरण के लिए बोने से पहले बीजों को 20 से 24 घण्टे तक पानी में भिगोना चाहिए तथा इसके पश्चात् टाट की बोरी के टुकड़े में लपेट कर किसी गर्म जगह पर रखना चाहिए। तोरई की खेती मुख्यतः नाली विधि से करते हैं। इसमें, तैयार खेत में उचित दूरी पर नालियाँ बना लेनी चाहिए तथा बीज की बुवाई नालियों में करनी चाहिए। नाली से नाली के बीच 2–2.5 मीटर तथा थाले से थाले के मध्य 80 सेमी दूरी रखनी चाहिए। नालियाँ 50 सेमी चौड़ी व 35 से 45 सेमी गहरी होनी चाहिए। बूँद–बूँद सिंचाई की व्यवस्था होने पर खेत में लेटरल को सीधी कतार में बिछाकर बीजों को ड्रिपर्स के पास बोते हैं। एक स्थान पर 2–3 बीजों को 1–2 सेमी की गहराई पर बोने चाहिए। बुवाई के 15–20 दिन बाद प्रत्येक जगह 1–2 स्वस्थ पौधे छोड़कर बाकी को निकाल देना चाहिए।

सिंचाई

सफल अंकुरण के लिए खेत में पर्याप्त नमी का होना अत्यन्त आवश्यक है इसके लिए फसल में समय पर पानी देना चाहिए। अंकुरण के बाद सप्ताह में एक बार सिंचाई अवश्य करनी चाहिए। गर्मी की फसल को औसतन 3–4 दिन पर सिंचाई की आवश्यकता होती है। वर्षा ऋतु के दौरान सिंचाई की आवश्यकता पौधों की लता विकास अवस्था में होती है तथा इस दौरान जल निकास का भी उचित प्रबन्ध करना चाहिए। फसल की क्रांतिक अवस्थाओं जैसे लता विकास, फूलन तथा फलों के विकास के समय सिंचाई अवश्य करनी चाहिए अन्यथा उपज में बहुत कमी हो जाती है। कम पानी की स्थिति में बूँद–बूँद सिंचाई प्रणाली सबसे उपयुक्त होती है, क्योंकि इस विधि में पानी की बचत सर्वाधिक होती है। इस प्रणाली में 4 लीटर प्रति घण्टे के ड्रिपर से 2–3 दिन के अन्तराल पर 2–3 घण्टे सिंचाई करनी चाहिए।

खरपतवार नियन्त्रण

खेत को खरपतवारमुक्त रखने के लिए समय–समय पर निराई–गुड़ाई करके खरपतवारों को निकालते रहना चाहिए। गर्मी की फसल में 2–3 तथा वर्षाकालीन फसल में 3–4 निराई–गुड़ाई करनी चाहिए।

तुड़ाई एवं उपज

फलों की तुड़ाई कच्ची अवस्था में करते हैं। सामान्य परिस्थितियों में मादा फूल खिलने के 4–5 दिन बाद वह फल सब्जी योग्य हो जाता है। फलों की तुड़ाई 2–3 दिन के अन्तराल पर सुबह के समय करनी चाहिए, क्योंकि धूप में तुड़ाई करने से फल जल्दी सूख जाते हैं जिससे उनका बाजार मूल्य कम मिलता है। फलों को किसी धारदार चाकू से काटना चाहिए, ताकि पौधों को नुकसान न हो। रासायनिक कीटनाशकों या दवाओं के छिड़काव के तुरन्त बाद तुड़ाई नही करें। फसल की उपज उसकी किस्म, मौसम, तुड़ाई की अवस्था व फसल उगाने की तकनीक, आदि पर निर्भर करती है। तोरई के सब्जी योग्य ताजा फलों की उपज सामान्यतः 150–180 क्विंटल/ हेक्टेयर प्राप्त होती है।

27. घीया तोरई

घीया तोरई (*लुफ्फा सिलेंडरीका*) की कृषि भारतवर्ष में एक मुख्य फसल के रूप में की जाती है। अधिकतर खेती भारतवर्ष के मैदानी भागों में की जाती है। इसे भारत के प्रत्येक प्रदेश में उगाया जाता है।

जलवायु

घीया तोरई हर प्रकार की जलवायु में उगाई जाती है लेकिन सफल उत्पादन के लिए उष्ण और नम जलवायु उत्तम रहती है।

मृदा

इसको सभी प्रकार की मृदाओं में उगाया जा सकता है परन्तु उचित जल निकास व जीवांश युक्त हल्की दोमट भूमि इसकी सफल खेती के लिए सर्वोत्तम है। उदासीन पी.एच. मान वाली भूमि अच्छी रहती है। नदियों के किनारे वाली भूमि घीया तोरई की खेती के लिए उपयुक्त रहती है। कुछ अम्लीय भूमि में इसकी खेती की जा सकती है।

किस्में

पूसा चिकनी, पूसा सुप्रिया, पूसा स्नेहा, काशी दिव्या

बीज दर व बुवाई

2.0–3.0 किग्रा बीज एक हेक्टेयर क्षेत्रफल की बुवाई के लिए पर्याप्त होता है। बीज जनित रोगों से सुरक्षा के लिए यथासम्भव उपचारित एवं प्रमाणित बीज ही बोना चाहिये। बीज जनित रोगों से सुरक्षा के लिए बीजों को 2.5 ग्राम थिरम प्रति किग्रा बीज की दर से उपचारित करके बोना चाहिए।

घीया तोरई की बुवाई जायद की फसल के लिये फरवरी से मार्च तक करते हैं तथा खरीफ या वर्षा ऋतु की फसल लेने के लिये जून–जुलाई के महीने में बोया जाता है। इस तरह से जायद की फसल अप्रैल से जून तक फल देती है तथा खरीफ की फसल से अक्टूबर से नवम्बर तक सब्जी के लिये फल मिलते रहते हैं।

बीज बोने के समय कतारों की आपस की दूरी 2.0 मीटर तथा पौधे से पौधे की दूरी 50–60 सेमी रखते हैं। प्रत्येक स्थान पर 2–3 बीज 3–4 सेमी की गहराई पर बोना चाहिए।

खाद और उर्वरक

200–250 क्विंटल सड़ी गली गोबर की खाद प्रति हेक्टेयर की दर से खेत की अंतिम जुताई के समय प्रयोग करना चाहिए। 80 किग्रा नत्रजन, 60 किग्रा फास्फोरस तथा 40 किग्रा पोटाश प्रति हेक्टेयर के हिसाब से देना चाहिए। फास्फोरस का प्रयोग सिंगल सुपर फास्फेट के रूप में अधिक लाभदायी रहता है क्योंकि इसमें 12 प्रतिशत गंधक की भी उपलब्धता होती है। फास्फोरस तथा पोटाश की पूरी मात्रा तथा नत्रजन की आधी मात्रा अन्तिम जुताई के समय खेत में प्रयोग करना चाहिए। नत्रजन की शेष मात्रा बुवाई के 25 से 30 दिन बाद टॉप ड्रेसिंग के रूप में देकर तने के पास मिट्टी चढ़ाना चाहिए।

सिंचाई

बुवाई से पहले खेत में पर्याप्त नमी का होना अत्यन्त आवश्यक है। गर्मी की फसल को औसतन

3–4 दिन पर सिंचाई की आवश्यकता होती है। फसल की क्रांतिक अवस्थाओं जैसे लता तथा फलों के विकास के समय सिंचाई अवश्य करनी चाहिए अन्यथा उपज में बहुत कमी हो जाती है। वर्षा ऋतु के दौरान जल निकास का उचित प्रबन्ध भी करना चाहिए। बूँद–बूँद सिंचाई प्रणाली सबसे उपयुक्त होती है।

अंतर–सस्य क्रियाएँ

बुवाई के 15 दिन के अन्दर घने पौधों को निकाल देना चाहिए। 30–35 दिन बाद एक निराई–गुड़ाई करके खरपतवारों को निकाल देना चाहिए। खरपतवार नष्ट करने के लिए 3.3 लीटर पेन्डीमेथालीन प्रति हेक्टेयर का प्रयोग बुवाई के बाद करने से भी खरपतवारों का नियन्त्रण किया जा सकता है।

तुड़ाई एवं उपज

फलों की छोटी व कच्ची अवस्था में ही तुड़ाई करनी चाहिए अन्यथा फल कठोर हो जाते हैं जिसके कारण घीया तोरई के गुणों में कमी आ जाती है और बाजार भाव भी कम मिलता है। घीया तोरई की पैदावार किस्म के ऊपर निर्भर करती है। 150–180 क्विंटल उपज प्रति हेक्टेयर प्राप्त होती है।

28. खीरा

खीरा (*कुकुमिस सेटाइवस*) सलाद के लिए मुख्य फसल है। इसकी खेती सम्पूर्ण भारतवर्ष के सभी भागों में की जाती है। यह फसल अधिकतर सलाद व सब्जी के लिये प्रयोग की जाती है। खीरे की फसल ग्रीष्म ऋतु में बोई जाती है। खीरा स्वास्थ्य के लिये लाभप्रद है तथा इसके सेवन से पाचन–क्रिया ठीक रहती है। खीरा में पोषक तत्व जैसे पोटेशियम, सोडियम, कैल्शियम, खनिज पदार्थ, फॉस्फोरस, विटामिन 'सी' तथा कार्बोहाइड्रेट पाये जाते हैं।

जलवायु

खीरा एक गर्म मौसम की फसल है तथा इसकी खेती के लिए 24–26° सेल्सियस तापमान उपयुक्त रहता है।

मृदा

खीरे की फसल लगभग सभी प्रकार की भूमि में पैदा की जा सकती है। लेकिन फिर भी सबसे उत्तम बलुई दोमट भूमि रहती है। सफल फसल उत्पादन के लिये जल–निकास का भी उचित प्रबन्ध होना अतिआवश्यक है। भूमि का पी.एच. मान 5.5 से 6.5 तक अनुकूल रहता है।

किस्में

पोइन्सेट, जापानी लौंग ग्रीन, पूसा संयोग, पूसा उदय

बीज एवं बुवाई

खीरे की बुवाई के लिए 1.5–2.0 किग्रा/हेक्टेयर बीज की आवश्यकता होती है। उत्तरी भारत व मैदानी क्षेत्रों में अगेती फसल जनवरी तथा पिछेती फसल मार्च के महीने के अन्त तक बोई जाती है। खरीफ फसल की बुवाई जून–जुलाई के अन्त तक की जाती है।

बीज से बीज की दूरी 50–60 सेमी तथा कतारों या कूड़ से कूड़ की दूरी 200–250 सेमी रखते हैं। एक जगह पर दो बीज लगाना चाहिए। खीरे की अगेती पैदावार के लिए लो टनल में भी बीज की बुवाई कर सकते हैं।

खाद एवं उर्वरक

अच्छी तरह सड़ी हुई गोबर की खाद 200–250 क्विंटल/हेक्टेयर की दर से बुवाई के एक महीने पहले खेत में अच्छी तरह मिला देना चाहिए। इस फसल को 60–80 किग्रा नत्रजन, 60–80 किग्रा फास्फोरस तथा 50–60 किग्रा पोटाश प्रति हेक्टेयर की जरूरत होती है। बुवाई के समय फास्फोरस व पोटाश की पूरी मात्रा तथा नत्रजन की आधी मात्रा डालनी चाहिए। शेष नत्रजन को खड़ी फसल में बुवाई के 25–30 दिन बाद निराई–गुड़ाई करके देना चाहिए।

सिंचाई

बुवाई के समय खेत में पर्याप्त नमी होनी चाहिए। अंकुरण के 2–3 दिन बाद सिंचाई करनी चाहिए। गर्मियों में 3–4 दिन के अंतराल पर पानी लगते रहना चाहिए।

अंतर–सस्य क्रियाएं

सिंचाई के बाद लगभग 5–6 दिन के अन्तर से खेत में से घास व अन्य खरपतवार निकालना चाहिए तथा साथ–साथ सघन पौधों की छंटाई (थीनिंग) भी कर देना चाहिए।

तुड़ाई एवं उपज

नरम अवस्था में फलों की तुड़ाई करना चाहिए। फलों को पीला नहीं होने देना चाहिए। अच्छी देखभाल करने से 150–200 क्विंटल उपज प्रति हेक्टेयर प्राप्त होती है।

29. चप्पन कद्दू

कद्दूवर्गीय सब्जियों में चप्पन कद्दू (*कुकुर्बिटा पीपो*) का विशेष स्थान है। इसकी खेती लो टनल में प्रमुखता से की जाती है। इसके कच्चे फलों को सब्जी के उपयोग में लाया जाता है।

जलवायु एवं मिट्टी

गर्म एवं अधिक आर्द्रता वाले क्षेत्र इसकी खेती के लिए सर्वोत्तम है। जल्दी अंकुरण के लिए मिट्टी का तापमान 18–20° सेल्सियस होना चाहिए। पौधों की बढवार के लिए 20–25° सेल्सियस तापमान अच्छा रहता है। फूल आने के समय अधिक वर्षा होने से फलत कम हो जाती है। अच्छी जल निकास व जीवांश युक्त बलुई दोमट मिट्टी इसके लिए सर्वोत्तम है। बुवाई से पूर्व 2–3 बार हल चलाकर खेत को अच्छी तरह से तैयार करना चाहिए।

प्रमुख किस्में

पूसा अलंकार, पंजाब चप्पन कद्दू–1, पेट्टी पान, आस्ट्रेलियन ग्रीन

बीज दर एवं बुवाई

एक हेक्टेयर में बुवाई के लिए 3.5–4.0 किग्रा बीज पर्याप्त रहता है। दिसम्बर से मार्च तक तथा जुलाई में बुवाई की जा सकती है। दिसम्बर में बुवाई पालिथीन की लो टनल में करनी चाहिए जिससे अगेती फसल प्राप्त होती है। इसकी बुवाई 1.5–2.0 मीटर की दूरी पर नालियाँ बनाकर की जाती है। पौधे से पौधे की दूरी 50–60 सेमी रखनी चाहिए।

खाद एवं उर्वरक

150–200 क्विंटल सड़ी–गली गोबर की खाद, 80–100 किग्रा नत्रजन, 50–80 किग्रा फास्फोरस तथा 50–60 किग्रा पोटाश प्रति हेक्टेयर की दर से देना चाहिए। रासायनिक उर्वरकों में नत्रजन की आधी मात्रा तथा फास्फोरस एवं पोटाश की पूरी मात्रा खेत में नालियाँ या थाले बनाते समय देते हैं। नत्रजन की शेष मात्रा को दो बराबर भागों में बाँटकर खड़ी फसल में जड़ों के पास बुवाई के 20 तथा 40 दिनों बाद देना चाहिए।

सिंचाई

बीज की बुवाई के समय खेत में नमी की पर्याप्त मात्रा होनी चाहिए जिससे बीजों का अंकुरण अच्छी प्रकार से हो सके। पौधों की वृद्धि, फूल आने के समय तथा फल की बढ़वार के समय पानी की कमी नही होनी चाहिए। बरसात वाली फसल के लिए सिंचाई की विशेष आवश्यकता नहीं पड़ती है।

अंतर–सस्य क्रियाएं

वर्षाकालीन फसल में खरपतवारों की समस्या अधिक होती है। बीज अंकुरण से लेकर प्रथम 25 दिनों तक खरपतवारों से फसल को ज्यादा नुकसान होता है। खरपतवारों से फसल की वृद्धि पर प्रतिकूल असर पड़ता है तथा पौधों की बढ़वार रुक जाती है। अतः खेत से समय–समय पर खरपतवारों को निकालते रहना चाहिए।

तुड़ाई व उपज

बुवाई के 45–50 दिन बाद फल तुड़ाई योग्य हो जाते हैं। फलों की हर दूसरे दिन तुड़ाई की जानी चाहिए अन्यथा फल जल्द ही बहुत बड़े हो जाते हैं जिससे बाजार भाव कम मिलता है। लगातार तुड़ाई करने से पौधों में अधिक फूल आते हैं। इसकी औसत उपज 200–250 क्विंटल प्रति हेक्टेयर प्राप्त होती है।

30. काशीफल या कुम्हड़ा (कद्दू)

सामान्यतः उत्तर भारत में काशीफल (*कुकुर्बिटा मोसचाता*) की खेती व्यावसायिक स्तर पर की जाती है। इसके फलों का उपयोग कच्ची एवं पकी दोनों अवस्थाओं में किया जाता है। पके हुये फल विटामिन 'ए' से भरपूर होते हैं। इसे सामान्य तापमान पर कई महीनों तक भंडारित किया जा सकता है।

जलवायु एवं मृदा

गर्म एवं अधिक आर्द्रता वाले क्षेत्र इसकी खेती के लिए सर्वोत्तम है। बीज के जमाव व पौधों की बढवार के लिए 18–25° सेल्सियस तापमान अच्छा होता है। फूल आने के समय अधिक वर्षा होने से फलत में कमी हो जाती है। जीवांशयुक्त बलुई दोमट मिट्टी इसके लिए सर्वोतम पायी गई है। वर्षाकाल में जल निकास का अच्छा प्रबन्धन होना चाहिए। बुवाई से पूर्व 2–3 बार जुताई करके खेत को अच्छी तरह से तैयार करना चाहिए।

प्रमुख किस्में

थार कवि, पूसा विकास, पूसा विश्वास, अर्का चन्दन एवं काशी हरित

बीज दर एवं बुवाई

प्रति हेक्टेयर 3.0–3.5 किग्रा बीज की आवश्यकता होती है। काशीफल की बुवाई का उपयुक्त समय फरवरी–मार्च तथा जून–जुलाई है। खेत में 2–2.5 मीटर की दूरी पर नालियाँ बना लेते हैं। नालियों की दोनों मेडों पर 90–120 सेमी की दूरी पर गड्ढे बनाकर एक स्थान पर 2–3 बीजों की बुवाई करते हैं।

खाद और उर्वरक

काशीफल की फसल में 200–250 क्विंटल गोबर की खाद, 80–100 किग्रा नत्रजन, 60–80 किग्रा फास्फोरस तथा 60–80 किग्रा पोटाश प्रति हेक्टेयर की दर से देना चाहिए। रासायनिक उर्वरकों में नत्रजन की आधी मात्रा तथा फास्फोरस एवं पोटाश की पूरी मात्रा खेत में नालियाँ या थाले बनाते समय देना चाहिए। नत्रजन की शेष मात्रा को दो बराबर भागों में बाँटकर खड़ी फसल में जड़ों के पास बुवाई के 20 तथा 40 दिनों बाद देकर मिट्टी चढ़ा देना चाहिए।

सिंचाई

बीजों के अंकुरण के लिए बुवाई के समय खेत में नमी की पर्याप्त मात्रा होनी चाहिए। गर्मी की फसल में 4–5 दिन के अंतराल पर तथा बरसात वाली फसल में आवश्यकता के अनुसार सिंचाई करना चाहिए। पौधों की वानस्पतिक वृद्धि, फूल आने के समय तथा फल की बढ़वार के समय खेत में पानी की कमी नही होनी चाहिए।

अंतर–सस्य क्रियाएं

अंकुरण से लेकर प्रथम 25 दिनों तक फसल को खरपतवारों से काफी नुकसान होता है। वर्षाकालीन फसल में खरपतवारों की समस्या अधिक होती है। अतः खेत से समय–समय पर खरपतवार निकालते रहना चाहिए। रासायनिक खरपतवारनाशक के रुप में पेन्डीमेथालीन 3.3 किग्रा प्रति हेक्टेयर की दर से 1000 लीटर पानी में घोलकर बुवाई के तुरंत बाद छिड़काव करना चाहिए।

तुड़ाई व उपज

बाजार के माँग के आधार पर फल की कच्ची व पकी दोनों अवस्थाओं में तुड़ाई करते हैं। सब्जी के रुप में प्रयोग करने के लिए फूल खिलने के 8–10 दिनों के अंदर तुड़ाई करते हैं। उचित देखभाल करने पर औसत उपज लगभग 300–350 क्विंटल प्रति हेक्टेयर प्राप्त होती है।

31. टनल तकनीक से कद्दूवर्गीय सब्जियों का उत्पादन

गर्म शुष्क क्षेत्रों में कद्दूवर्गीय सब्जियाँ जैसे ककड़ी, टिंडा, चप्पन कद्दू, खरबूजा, तरबूज, लौकी, तोरई आदि की खेती की जाती है। इन सब्जियों से लगभग सभी प्रकार के पोषक तत्व जैसे प्रोटीन, विटामिन तथा खनिज लवण प्राप्त होते हैं। ग्रीष्मकाल में इन सब्जियों की बुवाई फरवरी–मार्च में की जाती है क्योंकि अंकुरण के लिए 25–30° सेल्सियस तापमान आवश्यक है जो कि फरवरी माह के अंत तक आता है। जब इन सब्जियों में फूल आना शुरू होते हैं उस समय तापमान काफी बढ़ जाता है तथा तेज आँधी भी चलने लगती है। मई–जून माह में तापमान बहुत अधिक बढ़ जाता है तथा लू भी चलने लगती है जिससे वाष्पोत्सर्जन की दर बढ़ जाती है परिणामस्वरूप पौधे मुरझाने लगते हैं। उच्च तापमान के कारण इन सब्जियों में नर फूल अधिक बनते हैं तथा परागण में सहायक कीट भी कम हो जाते हैं। तापमान के 40° सेल्सियस से अधिक होने पर फसल की बढ़वार, उपज तथा गुणवत्ता पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। इन सब प्रतिकूल परिस्थितियों के कारण कद्दूवर्गीय सब्जियों की उपज काफी कम तथा निम्न गुणवत्ता की प्राप्त होती है जिससे उत्पादकों को भरपूर लाभ नहीं मिलता है। परन्तु लो टनल तकनीक को अपनाकर गर्म शुष्क क्षेत्रों में कद्दूवर्गीय सब्जियों की खेती सफलतापूर्वक की जा सकती है।

उन्नत किस्में: राजस्थान में विभिन्न कद्दूवर्गीय सब्जियों की अनुमोदित किस्में निम्नलिखित हैं:

फसल	उन्नत किस्में
चप्पन कद्दू	आस्ट्रेलियन ग्रीन, पूसा अलंकार
लौकी	थार समृद्धि, पूसा समर प्रोलिफ़िक लोंग, पूसा समर प्रोलिफ़िक राउंड, पूसा नवीन, पूसा संदेश
धारीदार तोरई	थार करणी, पूसा नसदार
तरबूज	थार माणक, शुगर बेबी, दुर्गापुरा लाल
खरबूजा	हरा मधु, पूसा मधुरस, दुर्गापुरा मधु, पंजाब सुनहरी
फूट ककड़ी	ए.एच.एस.–10, ए.एच.एस.–82
ककड़ी	थार शीतल, पंजाब लॉन्ग मेलन–1, अर्का शीतल
काचरी	ए.एच.के.–119, ए.एच.के.–200

लो टनल तकनीक

कद्दूवर्गीय सब्जियाँ गर्म जलवायु की फसलें हैं जिनमे ठंड तथा पाला सहन करने की क्षमता नहीं होती है। बीज के अंकुरण व पौधों की बढ़वार के लिए 25–30° सेल्सियस तापमान उपयुक्त रहता है। मौसम तथा क्षेत्रीय परिस्थितियों के आधार पर कद्दूववर्गीय सब्जियों की अगेती खेती के लिए निम्न सुरंग (लो टनल) तकनीक तथा दियारा विधि के रूपान्तरण से एक नई तकनीक अपनाई गई जो गर्म शुष्क क्षेत्रों के लिए उपयुक्त है। लो टनल तकनीक उत्तर भारत के मैदानी भागों में कद्दूवर्गीय सब्जियों की बेमौसम खेती के लिए बहुत उपयोगी है जहाँ सर्दी के मौसम में रात का तापमान लगभग 40 से 60 दिनों तक 8° सेल्सियस से नीचे रहता है। इस तकनीक में दिसम्बर माह के अन्तिम सप्ताह से लेकर जनवरी माह के प्रथम सप्ताह में बीजों की बुवाई ड्रिप युक्त नाली (ट्रेंच) में करके इसको प्लास्टिक की चादर से ढ़क देते हैं जिससे कद्दूवर्गीय सब्जियों को उनके सामान्य समय से पहले उगाना संभव है। इस तकनीक से फसल निम्न तापमान व पाले से सुरक्षित रहती है तथा सामान्य दशाओं में बोई गई फसल से 30–45 दिन पहले तैयार हो जाती है जिससे किसान को बाजार भाव भी अधिक मिलता है।

दिसम्बर माह में खेत में फसल के अनुसार 2–2.5 मीटर की दूरी पर 45 सेमी चौड़ी तथा 45–60 सेमी गहरी नालियाँ पूर्व से पश्चिम दिशा में बनाते हैं। इन नालियों में सड़ी–गली गोबर की खाद (150 क्विंटल/ हेक्टेयर) तथा नत्रजन, फास्फोरस व पोटाश क्रमशः 20, 60 व 60 किग्रा/ हेक्टेयर डालनी चाहिए। बुआई के 20 एवं 40 दिन बाद नत्रजन की 20–20 किग्रा मात्रा को टॉप ड्रेसिंग के रूप में जड़ के पास देना चाहिए। पानी में घुलनशील 19:19:19 एन.पी.के. 10–15 किग्रा/ हेक्टेयर को फसल की वानस्पतिक बढ़वार के समय ड्रिप द्वारा सिंचाई के साथ देना चाहिए। नत्रजन की अधिक मात्रा देने से बचना चाहिए अन्यथा पौधों की वानस्पतिक बढवार अधिक होगी तथा नर फूल अधिक संख्या में आएँगे परिणामस्वरूप फलत कम होगी। सिंचाई के लिए 4 लीटर/ घण्टा पानी डिस्चार्ज वाले ड्रिपर की 12–16 मिमी आकार की ड्रिप पाईप (लेटरल) जिन पर 60–80 सेमी की दूरी पर इनलाइन ड्रिपर लगे हो, को नालियों में बिछा देना चाहिए।

बुवाई करने से पूर्व बीजों का अंकुरण कराना आवश्यक है क्योंकि दिसम्बर–जनवरी माह में निम्न तापमान के कारण इनका अंकुरण देर से होता है। अतः अंकुरण के लिए बीजों को पानी में भिगोना चाहिए। पानी में भिगोने की अवधि बीज के छिलके की मोटाई पर निर्भर करती है जो कि 3–4 घण्टा (खरबूजा, खीरा, ककड़ी), 6–8 घण्टा (लौकी, तोरई) तथा 10–12 घण्टा (टिंडा, तरबूज) रखनी चाहिए। भिगोने के बाद बीज को केप्टान (2 ग्राम/ किग्रा बीज) से उपचारित करना चाहिए। बीज उपचार के बाद उन्हें बोरे के टुकड़े में लपेटकर किसी गर्म स्थान जैसे बिना सड़ी हुई गोबर की खाद या भूसा में 1–2 दिन तक दबाने से बीजों का अंकुरण शीघ्र हो जाता है। इन अंकुरित बीजों की बुवाई तैयार नालियों में दिसम्बर के अंतिम सप्ताह से जनवरी के प्रथम सप्ताह तक कर देनी चाहिए। एक ड्रिपर के पास कम से कम 2 बीजों की बुवाई करते हैं। नाली (ट्रेंच) के ऊपर अर्ध चंद्राकार जंगरोधी लोहे के तारों (2 मिमी मोटाई) को 3–4 मीटर की दूरी पर स्थापित करते हैं। इन तारों पर 25–50 माईक्रोन मोटी तथा 2 मीटर चौड़ी पारदर्शी प्लास्टिक की चादर बिछाकर इसकी लम्बाई वाले

दोनो सिरों को मिट्टी से दबा दिया जाता है। इस प्रकार बोई गई फसल पर प्लास्टिक की एक लघु सुरंग बन जाती है। प्लास्टिक से ढकने से नाली के अंदर का तापमान सामान्य से 8–10° सेल्सियस अधिक बना रहता है जिससे बीजों का अंकुरण जल्दी हो जाता है तथा पौधों का विकास भी सुचारु रूप से होता रहता है। समय–समय पर प्लास्टिक को हटाकर फसल का निरीक्षण भी करते रहना चाहिए तथा कीट व बीमारी का प्रकोप होने पर उनका समुचित नियंत्रण भी करना चाहिए। इस विधि से बुआई करने पर फूल बनते समय वातावरण का तापमान बहुत अनुकूल रहता है जिससे मादा फूल अधिक आते हैं तथा उस समय परागण करने वाले कीट भी अधिक होने से फलत अच्छी होती है।

फरवरी के दूसरे या तीसरे सप्ताह में जब मौसम का तापमान बढ़ जाता है तथा कद्दूवर्गीय सब्जियों की बढ़वार के अनुकूल हो जाता है तो प्लास्टिक की टनल को हटाकर खरपतवारों को निकाल देना चाहिए। प्लास्टिक की टनल को कभी भी एकदम नहीं हटाना चाहिए क्योंकि ऐसा करने से पौधों को धक्का लगता है तथा वे मुरझा जाते हैं जिससे उनकी वानस्पतिक वृद्धि पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। अतः सबसे पहले टनल के दोनों छोर से प्लास्टिक को हटा देना चाहिए तथा इसके 2–3 दिन बाद प्लास्टिक को दिन में हटा देना चाहिए तथा शाम के समय पौधों को वापस प्लास्टिक से ढक देना चाहिए। यह प्रक्रिया 2–3 दिन तक करने से पौधों का कठोरीकरण हो जाता है तथा पौधे मौसम के अनुकूल ढल जाते हैं। इस प्रकार इस तकनीक से बोई गई फसल, सामान्य दशा में बोई फसल से 40–50 दिन अगेती प्राप्त होती है जिससे गुणवत्तायुक्त उपज मिलती है तथा अगेती होने के कारण बाजार में इन सब्जियों का मूल्य भी अधिक प्राप्त होता है।

फसल का उच्च तापमान से बचाव

पौधों की वानस्पतिक वृद्धि के दौरान कतारों के बीच सरकंडा बिछा देना चाहिए जिससे पौधों का गर्म मिट्टी से बचाव होने के कारण बढ़वार अच्छी होती है तथा फल भी सीधे जमीन के संपर्क मे नहीं आने से कई बीमारियों से बच जाते हैं। वानस्पतिक वृद्धि के समय पौधों को दिशा देनी चाहिए ताकि उनके तन्तु सरकंडा को पकड़ लें। सरकंडा बिछाने से पौधे जमीन पर उचित तरीके से फैलते हैं जिससे लगभग सभी मादा फूलों में परागण हो जाता है। बेलें तेज आंधी से एकड्डा होने से भी बच जाती हैं जिससे फूल नहीं झड़ते हैं। अप्रैल–मई माह में तापमान 40° सेल्सियस से अधिक होने के कारण परागण में सहायक कीट कम हो जाते हैं जिससे फल कम बनते हैं। अतः उचित परागण के लिए प्रति एकड़ 1–2 मधुमक्खी के छत्ते रखना चाहिए। इस प्रकार लो टनल तकनीक से कद्दूवर्गीय सब्जियों की खेती करके किसान अधिक उपज तथा लाभ प्राप्त कर सकते हैं।

लागत कम करने के उपाय

प्लास्टिक को हटाने के बाद इसको ठीक से समेट कर रखना चाहिए ताकि अगले वर्ष पुनः उपयोग में लेना चाहिए। फसल समाप्त होने पर सरकंडा को भी एकत्र करके रखें व अगले वर्ष पुनः उपयोग में लेना चाहिए। अर्ध चंद्राकार जंगरोधी लोहे के तारों की बजाय फालसा की प्रूनिंग से प्राप्त टहनियो को लगाएँ क्योंकि इनमें लचक होती है तथा फालसा की प्रूनिंग का समय भी दिसम्बर होता है। फालसा को खेत के चारों तरफ लगाना चाहिए जिससे फल व टहनियाँ भी प्राप्त होगी तथा यह ग्रीष्मकाल में तेज हवा को रोकने में भी सहायक होगा। एकीकृत कीट प्रबन्धन अपनाएँ तथा कीटनाशकों का प्रयोग आवश्यकतानुसार व संस्तुतित मात्रा में ही करना चाहिए।

32. कद्दूवर्गीय सब्जियों के प्रमुख कीट-व्याधियाँ एवं प्रबन्धन

फल मक्खी: इसका प्रकोप फरवरी से लेकर नवम्बर तक होता है। मादा फल मक्खी अपने अंडरोपक को कोमल फलों के अंदर घुसाकर गूदे मे अण्डे देती है। ग्रसित फल के छेद से लसदार हल्के भुरे रंग का द्रव निकलता है। अण्डे से मैगट निकलकर फल के गूदे को खा जाते हैं तथा फल सड़ जाता है।

कद्दू का लाल कीड़ा: इसके भृंग व व्यस्क पत्तियों एवं फूलों को नुकसान पहुंचाते हैं तथा ग्रब पौधे की जडों को खाते हैं। जो फल जमीन पर रखे होते हैं उनके निचले भाग में छिद्र करके ग्रब काफी संख्या में फल में प्रवेश कर जाते है तथा अंदर से खोखला कर देते हैं।

हाडा बीटल: इस कीट के व्यस्क एवं ग्रब दोनों ही पौधे को नुकसान पहुंचाते हैं। यह एक विशेष तरीके से पत्तियों एवं फलों को कुरेदता है जिससे धीरे–धीरे पत्तियाँ एवं फल सूख जाते हैं।

पत्ती भेदक सुंडी: इस कीट की सुंडी ही पौधे की पत्तियों को नुकसान करती है। अंडे सें निकलने के बाद सुंडी रेशमी धागे के साथ पत्तियों को रोल करती है और शिराओं के बीच से पत्ती को खाती है। नुकसान किये हुये फल बाद में सड़ने लगते है।

लीफ माइनर: इसका मेगट पत्तियों के ऊपरी भाग पर भूरे रंग की टेढ़ी–मेढी सुरंग बना देता है, जिससे पत्ते मुड़ जाते हैं एवं प्रकाश संश्लेषण कम हो जाता है।

चेपा: ये छोटे आकार के काले एवं हरे रंग के होते हैं तथा कोमल पत्तियों, पुष्पकलिकों का रस चूसते हैं। यह कीट विषाणु जनित बीमारियों के वाहक का कार्य करता है।

एकीकृत कीट प्रबन्धन

सब्जियों में आईपीएम का महत्त्व और बढ़ जाता है क्योंकि सब्जियाँ मनुष्य द्वारा ताजा अवस्था में खाई जाती है। इसलिए सब्जियों में एकीकृत कीट प्रबन्धन अपनाना चाहिए।

क. कीटों के एकीकृत प्रबंधन में सबसे प्रभावी तरीका खेत की सफाई करना होता है। फल मक्खी, चितकबरी सुंडी, कद्दू का लाल कीड़ा, हाडा बीटल आदि के प्रजनन चक्र और जनसंख्या वृद्धि को रोकने के लिये गर्मी के दिनों में खेत की गहरी जुताई करनी चाहिये। पौधों और फलों के क्षतिग्रस्त भागों को हटा कर नष्ट कर देना चाहिए।

ख. क्यू–आकर्षण ट्रैप फल मक्खी के प्रबंधन में काफी प्रभावशाली है। क्यू–आकर्षण ट्रैप फल मक्खी के नर को आकर्षित करता है तथा इसके अंदर रखे कीटनाशक से नर मर जाता है। इस प्रकार मादा को संभोग करने के लिये नर नहीं मिलने से इस कीट का नियंत्रण हो जाता है। फल मक्खी को नियंत्रित करने के लिए विभिन्न प्रकार के क्यू–ल्यूर जैसे फ्लाईसीड 20%, ऊगे–ल्यूर 8%, क्यू–ल्यूर 85% + नैल्ड, क्यू–ल्यूर 95% + नैल्ड आदि बाजार मे उपलब्ध हैं। एक हेक्टेयर क्षेत्र के लिए 7–8 क्यू–आकर्षण ट्रैप पर्याप्त होते हैं। एक लीटर पानी में 250 ग्राम गुड़ तथा 4–5 मिली मेलाथियान 50 ई सी मिलाकर इसको छोटे–छोटे बर्तनों में भरकर एक हेक्टेयर क्षेत्र में 8–10 जगह रखना चाहिए तथा आवश्यकतानुसार उपरोक्त घोल से भरते

रहने से भी फल मक्खी का नियंत्रण किया जा सकता है। खेत में रात के समय प्रकाश के ट्रेप लगायें तथा उनके नीचे किसी बर्तन में चिपकने वाला पदार्थ जैसे गुड़ का घोल भरकर रखें व इस घोल को 2–3 दिन बाद बदलते रहें।

ग. कीटनाशकों का प्रयोग आवश्यकता के अनुसार व सावधानी पूर्वक करना चाहिए। कददूवर्गीय सब्जियों के लिए निम्नलिखित कीटनाशक उपयुक्त रहते हैं।

प्रकोप कम हो जाएगा। पौधशाला में बुवाई से पूर्व कार्बोफ्यूरान 10 ग्राम प्रति वर्गमीटर की दर से जमीन में डाल देना चाहिए ताकि आरंभ में जड़ ग्रंथि सूत्रकृमि को पनपने से रोका जा सके।

प्रमुख बीमारियां एवं प्रबंधन

फफूंद जनित रोग

मृदुरोमिल आसिताः पत्ती की ऊपरी सतह पर हल्के पीले कोणीय धब्बे दिखाई देते हैं। बाद में इन धब्बों के ठीक निचली सतह पर मृदुरोमिल फफूंद बैंगनी रंग की दिखाई देती है।

उन्नत किस्में: राजस्थान में विभिन्न कद्दूवर्गीय सब्जियों की अनुमोदित किस्में निम्नलिखित हैं:

कीट	कीटनाशक तथा प्रति लीटर पानी मे कीटनाशक की मात्रा
फल मक्खी, कद्दू का लाल कीड़ा, पत्ती भेदक सुंडी, हाडा बीटल	डाइमेथोएट 30 ई सी या मेलाथियान 50 ई सी (1.5–2.0 मिली) या स्पाईनोसेड 45 एस सी (0.5–0.6 मिली)
चेपा, सफेद मक्खी, लीफ माइनर	इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस एल या थायोमिथोक्ज़ाम 70 ड्ब्लू एस (0.4–0.5 मिली)

जड़ ग्रन्थि सूत्रकृमि

यह *मेलाइडोगाइन जावानिका* व *मेलाइडोगाइन ईंकोग्निटा* सूत्रकृमि से होता है। लगातार एक ही खेत में कद्दूवर्गीय सब्जियों को बोते रहने से इनका विस्तार अधिक होता है। इससे पौधों की पत्तियाँ पीली पड़कर झुलसने लगती हैं तथा तने का रंग पीला पड़ने लगता है। जड़ों पर छोटी–छोटी गांठे पड़ जाती हैं तथा फसल की पैदावार पर विपरीत प्रभाव पड़ता है।

रोकथाम के लिए उचित फसल चक्र अपनाकर सूत्रकृमियों को नष्ट किया जा सकता है। खेत में 1.5 किग्रा कार्बोफ्यूरान सक्रीय तत्व को प्रति हेक्टेयर की दर से डालकर बुवाई करनी चाहिए। ग्रीष्म ऋतु में खेत की मिट्टी पलटने वाले हल से गहरी जुताई कर उसे सूर्य का ताप लगाने के लिए छोड़ देना चाहिए इससे सूत्रकृमि के अण्डे, लार्वा, मादा आदि नष्ट हो जाएंगे जिससे इनका

उपचारित बीज बोना चाहिए। खड़ी फसल पर इंडोफिल एम–45 या रिडोमिल एम जेड–72 का 2 ग्राम/ लीटर पानी की दर से घोलकर छिड़काव करना चाहिए।

चुर्णिल आसिताः पत्तियों की ऊपरी सतह पर सफेद या धुंधले धूसर, गोल व छोटे धब्बे बनते हैं जो बाद में पूरी पत्ती पर फैलकर सफेद चूर्ण की तरह ऊपरी सतह को ढक लेते हैं। तीव्र संक्रमण होने पर पत्तियाँ गिर जाती हैं।

रोग की प्रारम्भिक अवस्था पर केराथेन (1 ग्राम/ लीटर पानी) का छिड़काव करना चाहिए। गंधक के चूर्ण का 25–30 किग्रा/ हेक्टेयर के हिसाब से 10–15 दिन के अंतराल पर तीन बार भुरकाव करें।

फल विगलनः इस रोग से ग्रसित फलों पर गहरे नीले रंग के धब्बे बन कर फल सड़ने लगते हैं तथा उनमें दुर्गंध आने लगती है।

फलों के नीचे घासफूस बिछाकर उनको मिट्टी की सतह के सम्पर्क से बचाना चाहिए या बेलों को सहारा देना चाहिए। बुवाई से पहले बीज का उपचार ट्राईकोड्रमा (4–5 ग्राम/ किग्रा बीज) अथवा थिरम (2 ग्राम/ किग्रा बीज) से करना चाहिए। खड़ी फसल मे कार्बण्डाजिम (2.5 ग्राम/ लीटर पानी) का छिड़काव करना चाहिए।

श्यामवर्ण (एन्थ्रेक्नोज): आरम्भ में पत्तियों पर पीले, गोल जलयुक्त धब्बे दिखाई देते हैं। ये धब्बे आपस में मिलकर बड़े व भूरे हो जाते हैं। रोग ग्रसित पत्तियाँ सूख जाती है। फलों पर धब्बे गोलाकार जलयुक्त व हल्के रंग के होते हैं।

बीज को थिरम या कार्बण्डाजिम (1–2 ग्राम/ किग्रा बीज) से उपचारित करके बोने चाहिए। इंडोफिल एम–45 या कॉपर ऑक्सीक्लोराइड (2 ग्राम/लीटर पानी) का छिड़काव 7 दिन के अंतराल पर 2 बार करना चाहिए।

अल्टरनेरिया पत्ती झुलसा: पत्ती पर केन्द्रीयकृत गोल आकार के हल्के भूरे रंग के धब्बे बनते हैं जो बाद में गहरे रंग के व आकार में बड़े हो जाते हैं। पौधे की पत्तियाँ झुलसी हुई दिखाई देती है।

फसल पर इंडोफिल एम–45 (2–3 ग्राम/ लीटर पानी) का 10–15 दिन के अंतराल पर छिड़काव करना चाहिए।

उकठा रोग (विल्ट): पौधों का ऊपरी भाग किसी भी अवस्था पर मुरझा कर सूख जाता है। पत्तियाँ पीली हो जाती है। कॉलर वाला क्षेत्र सिकुड़ जाने से पौधे मर जाते हैं। पौधों की जड़ें व भीतरी भाग भूरा हो जाता है।

बुवाई से पहले बीज को कार्बण्डाजिम (1–2 ग्राम/ किग्रा बीज) से उपचारित करें। खड़ी फसल मे कार्बण्डाजिम की 2 ग्राम/ लीटर पानी की दर से ड्रेन्चिंग करना चाहिए।

विषाणु जनित रोग

मोजेक: पौधे छोटे व विकृत हो जाते हैं तथा उनकी वृद्धि रुक है। पत्तियाँ सिकुड़ जाती है तथा इन पर एक पीला मोजेक या मोटिल क्रम दिखाई देता है जिसमें क्लोरोटिक धब्बे दिखते हैं। कुछ पुष्प, गुच्छों में परिवर्तित हो जाते हैं। फल छोटे व विकृत हो जाते हैं।

उपचारित बीज का प्रयोग करें। इमिडाक्लोप्रिड (0.4–0.5 मिली/ लीटर पानी) का खड़ी फसल पर 10 दिन के अंतराल पर 2–3 बार छिड़काव करें, जिससे रोग वाहक कीट नष्ट हो जाते हैं।

कलिका परिगलन (बड नेक्रोसिस): रोग ग्रसित तने छोटे रह जाते हैं। कली में गलन हो जाती है तथा बाद में कलिका तथा कलिका वाली पूरी शाखा सूख जाती है। पत्तियाँ सिकुड़ कर पीली पड़ जाती है। तरबूज की फसल इस बीमारी से काफी प्रभावित होती है।

उपचारित बीज का प्रयोग करें। इस बीमारी के वाहक कीट (थ्रिप्स) को नियंत्रित करने के लिए इमिडाक्लोप्रिड (0.4–0.5 मिली/ लीटर पानी) का खड़ी फसल पर 10 दिन के अंतराल पर 2–3 बार छिड़काव करना चाहिए। फसल के लिए सिल्वर रंग की पराबैंगनी परावर्तक (अल्ट्रा वोइलेट रिफलेक्टिव) मल्च का प्रयोग करना चाहिए।

NOTE

NOTE

हर कदम, हर डगर
किसानों का हमसफर
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद

Agrisearch with a human touch